संस्कृति IAS

सामान्य अध्ययन

आधुनिक भारत का इतिहास

CSE पाठ्यक्रम के अनुरूप

Powered by

Sanskriti IAS

संस्कृति IAS

आधुनिक भारत का इतिहास

विषय-सूची

इकाई	टॉपिक	पृष्ठ संख्या
1	भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन	3-8
2	बंगाल एवं मैसूर विजय	9-12
3	मराठों पर नियंत्रण	13-15
4	सिंध, पंजाब एवं अवध विजय	16-22
5	ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव	23-39
6	ब्रिटिश प्रशासनिक नीति	40-50
7	ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियाँ	51-65
8	भारतीय प्रतिक्रिया	66-91
9	सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन	92-107
10	राष्ट्रीय आंदोलन	108-119
11	बंगाल विभाजन	120-127
12	क्रांतिकारी आंदोलन	128-134

इकाई	टॉपिक	पृष्ठ संख्या
13	गांधीवादी आंदोलन	135-142
14	असहयोग आंदोलन एवं स्वराज पार्टी	143-150
15	साइमन कमीशन, नेहरू रिपोर्ट एवं लाहौर अधिवेशन	151-155
16	सविनय अवज्ञा आंदोलन	156-162
17	सांप्रदायिक निर्णय एवं पूना पैक्ट	163-166
18	अगस्त प्रस्ताव व क्रिप्स मिशन	167-169
19	भारत छोड़ो आंदोलन	170-174
20	1942-47 के बीच का भारत	175-182
21	समाजवादी आंदोलन	183-191
22	ब्रिटिश भारत में संवैधानिक विकास	192-198
23	देशी रियासत	199-201
24	भारत में सांप्रदायिकता का विकास	202-208

इकाई 1	# भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन (Arrival of European Companies in India)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन
  - ➤ पुर्तगालियों का भारत आगमन
  - ➤ डचों का भारत आगमन
  - ➤ अंग्रेज़ों का भारत आगमन
  - ➤ भारत में फ्राँसीसी शक्ति का आगमन
  - ➤ आंग्ल-फ्राँसीसी संघर्ष
  - ➤ फ्राँसीसियों की पराजय के कारण
- भारत में ब्रिटिश विजय
  - ➤ ब्रिटिश विजय: संयोगवश या उद्देश्यपूर्ण
  - ➤ यूरोपीय शक्तियों के परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों की सफलता के कारण
  - ➤ क्षेत्रीय शक्तियों के परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों की सफलता के कारण

भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन (Arrival of European Companies in India)

पुर्तगालियों का भारत आगमन (Arrival of the Portuguese in India)

- यूरोपीय शक्तियों में सबसे पहले पुर्तगालियों ने भारत में प्रवेश किया। नए समुद्री मार्ग की खोज करते हुए वास्कोडिगामा 1498 ई. में केप ऑफ गुड होप से होकर भारत के पश्चिमी तट पर अवस्थित कालीकट बंदरगाह पहुँचा, जहाँ कालीकट के तत्कालीन शासक जमोरिन ने उसका स्वागत किया।
- वास्कोडिगामा के भारत आगमन से पूर्व 1487 ई. में 'बार्थोलाम्यो डियाज़' नामक पुर्तगाली अफ्रीका के दक्षिणी सिरे तक पहुँचा तथा इस स्थान को 'केप ऑफ गुड होप' नाम प्रदान किया।
- 1498 ई. में एस्तादो द इंडिया के नाम से पुर्तगाली कंपनी की स्थापना की गई। भारत में प्रथम पुर्तगाली किले की स्थापना 1503 ई. में कोचीन में तथा द्वितीय किले की स्थापना 1505 ई. में कुन्नूर में की गई।
- प्रथम गवर्नर के रूप में 'फ्राँसिस्को डी अल्मीडा' भारत आया। अल्मीडा द्वारा भारत में नीले या शांत जल की नीति को अपनाया गया।
- 1509 ई. में 'अल्फांसो डी अल्बुकर्क' अगले पुर्तगाली गवर्नर के रूप में भारत आया, जिसे भारत में पुर्तगाली शक्ति का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। 1510 ई. में अल्बुकर्क ने गोवा को बीजापुर के शासक यूसुफ आदिलशाह से छीनकर अपने नियंत्रण में लिया। अल्बुकर्क ने 1511 ई. में मलक्का तथा 1515 ई. में फारस की खाड़ी में स्थित होर्मुज़ पर भी अधिकार कर लिया। इसी समय हिंदू महिलाओं के साथ विवाह की नीति भी अपनाई गई।
- अल्बुकर्क के बाद 1529 ई. में नीनो डी कुन्हा अगला पुर्तगाली गवर्नर बनकर भारत आया। 1530 ई. में कुन्हा ने पुर्तगालियों की औपचारिक राजधानी कोचीन से गोवा स्थानांतरित कर दी। कुन्हा ने हुगली और सेंट टोमे में पुर्तगाली बस्तियों को स्थापित किया। इसके अतिरिक्त, 1534 ई. में बसीन तथा 1535 ई. में दीव पर अधिकार कर लिया।
- 1536 ई. में बंगाल के शासक महमूदशाह ने पुर्तगालियों को चटगाँव और सतगाँव में फैक्ट्री खोलने की अनुमति दी। साथ ही, अकबर ने हुगली में तथा शाहजहाँ ने बुंदेल में कारखाना खोलने की अनुमति प्रदान की।
- भारत में प्रथम पादरी फ्राँसिस्को जेवियर का आगमन पुर्तगाली गवर्नर अल्फांसो डिसूज़ा के समय हुआ। पुर्तगाली पूर्वी एशियाई देशों से व्यापार हेतु नागपट्टनम बंदरगाह का प्रयोग करते थे। साथ ही, मसुलीपट्टनम तथा पुलिकट शहरों से वस्त्रों का निर्यात किया जाता था।
- पुर्तगालियों ने कार्टेज-आर्मेडा-काफिला पद्धति का प्रयोग किया, जिसके अंतर्गत हिंद महासागर का प्रयोग करने वाले प्रत्येक जहाज़ को शुल्क अदा करना होता था। मुगल शासक अकबर को भी पुर्तगालियों से कार्टेज लेना पड़ा। 1632 ई. में शाहजहाँ ने हुगली को पुर्तगालियों के अधिकार से छीना तथा 1686 ई. में औरंगज़ेब ने चटगाँव से समुद्री लुटेरों का सफाया किया।
- भारत में तंबाकू व लाल मिर्च की खेती और जहाज़ निर्माण व प्रिंटिंग प्रेस की शुरुआत पुर्तगालियों ने की। 1556 ई. में गोवा में प्रथम प्रिंटिंग प्रेस की स्थापना की गई। इसी तरह, भारत में गोथिक स्थापत्य कला पुर्तगालियों की ही देन है।

भारत में आने वाली यूरोपीय कंपनियाँ

क्र.सं.	यूरोपीय कंपनियाँ	स्थापना वर्ष
1.	एस्तादो द इंडिया (पुर्तगाल)	1498 ई.
2.	ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी (ग्रेट ब्रिटेन)	1599 ई.
3.	वेरिंगदे ओस्टइन्दिशे कंपनी (डच/नीदरलैंड)	1602 ई.
4.	डेन ईस्ट इंडिया कंपनी (डेनमार्क)	1616 ई.
5.	कंपनी देस इंडस ओरिएटेल्स (फ्राँस)	1664 ई.

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 2

बंगाल एवं मैसूर विजय (Conquest of Bengal and Mysore)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'बंगाल एवं मैसूर विजय तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- अंग्रेज़ों की बंगाल विजय
  - प्लासी का युद्ध
  - प्लासी के युद्ध के बाद का घटनाक्रम
  - बक्सर का युद्ध
- अंग्रेज़ों की मैसूर विजय
  - प्रथम आंग्ल-मैसूर युद्ध
  - द्वितीय आंग्ल-मैसूर युद्ध
  - तृतीय आंग्ल-मैसूर युद्ध
  - चतुर्थ आंग्ल-मैसूर युद्ध

अंग्रेज़ों की बंगाल विजय (Victory of British over Bengal)

- अंग्रेज़ों द्वारा बंगाल की विजय 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध की महत्त्वपूर्ण घटना थी। बंगाल भारत के अन्य राज्यों की तुलना में धनी और समृद्ध था। ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने शुरुआती दौर में बंगाल राज्य में व्यापार करके बहुत अधिक लाभ कमाया, जिसने अंग्रेज़ों की व्यापारिक महत्त्वाकांक्षाओं को बढ़ाने का काम किया। जॉब चारनाक द्वारा कलकत्ता की स्थापना के साथ ही ब्रिटिश कंपनी की व्यापारिक महत्त्वाकांक्षाएँ राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं में बदलने लगीं।
- बंगाल के नवाब के राजकीय पद का स्थायित्व स्थानीय ज़मींदारों, धनाढ्यों तथा अभिजात्य वर्ग के समर्थन पर निर्भर करता था। 1756 ई. में सिराजुद्दौला बंगाल का नवाब बना किंतु सिराजुद्दौला की मौसी घसीटी बेगम तथा भाई शौकत जंग द्वारा उत्तराधिकार का विरोध किया गया। सिराजुद्दौला के अन्य विरोधियों में मीर ज़ाफर, जगतसेठ, रायदुर्लभ, अमीरचंद तथा राजवल्लभ सम्मिलित थे।
- वहीं दूसरी तरफ, अंग्रेज़ों की बढ़ती व्यापारिक गतिविधियों ने नवाब सिराजुद्दौला को संकट में डाल दिया। इसी अनिश्चितता के वातावरण में सिराजुद्दौला ने 1756 ई. में कलकत्ता पर आक्रमण कर दिया तथा फोर्ट विलियम पर कब्ज़ा कर लिया।

ब्लैक होल की घटना (Black Hole Event)

इस घटना के अंतर्गत अंग्रेज़ बंदियों को, (जिनमें स्त्रियाँ और बच्चे भी सम्मिलित थे) एक कक्ष के अंदर बंद कर दिया गया। इस घटना का वर्णन करने वाले अंग्रेज़ अधिकारी जे.जेड. हालवेल ने बताया कि नवाब ने 20 जून की रात को 146 अंग्रेज़ कैदियों को 18 फुट लंबी और 14 फुट 10 इंच चौड़ी कोठरी में बंद कर दिया। अगले दिन हालवेल सहित मात्र 23 व्यक्ति ही ज़िंदा बचे। ब्लैक होल के नाम से जानी गई इस घटना की सत्यता को लेकर संदेह है। ध्यातव्य है कि समकालीन इतिहासकार गुलाम हुसैन की पुस्तक 'सियार-उल-मुत्खेरिन' में भी इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता।

- इसके परिणामस्वरूप मद्रास से क्लाइव और वाटसन के नेतृत्व में ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना कलकत्ता पहुँची, जिसने 1757 ई. में नवाब से 'अलीनगर की संधि' की। इस संधि के अनुसार, अंग्रेज़ों को कलकत्ता की किलेबंदी तथा व्यापार करने के पुराने अधिकार मिल गए और कलकत्ता पर अधिकार करने में अंग्रेज़ों को जो क्षति हुई उसकी क्षतिपूर्ति का वचन भी नवाब द्वारा दिया गया।

प्लासी का युद्ध (Battle of Plassey), 1757 ई.

- अलीनगर की संधि के पश्चात् अंग्रेज़ आक्रांता की भूमिका में आ गए। 13 जून, 1757 ई. को क्लाइव ने अपने सैन्य अभियान का आरंभ चंद्रनगर से किया तथा शीघ्र ही प्लासी तक पहुँच गया।
- प्लासी की लड़ाई के पूर्व ही क्लाइव ने षड्यंत्र के द्वारा नवाब के प्रमुख अधिकारियों (प्रधान सेनापति मीर ज़ाफर, बंगाल का साहूकार जगतसेठ, रायदुर्लभ तथा अमीरचंद) को अपनी तरफ मिला लिया।
- 23 जून, 1757 ई. को प्रतिद्वंद्वी सेनाएँ आपस में टकराईं, जिसमें अंग्रेज़ी सेना का नेतृत्व क्लाइव ने किया, वहीं नवाब की सेना का नेतृत्व विश्वासघाती मीर ज़ाफर के हाथों में था। इन्हीं राजद्रोहियों के कारण सिराजुद्दौला के विश्वसनीय सैनिक मीर मदान एवं मोहनलाल वीरगति को प्राप्त हुए और सिराजुद्दौला ने भागकर मुर्शिदाबाद में शरण ली, जहाँ मीर ज़ाफर के पुत्र ने उसकी हत्या कर दी।
- युद्ध के बाद मीर ज़ाफर को अंग्रेज़ों ने नवाब घोषित कर दिया, जिसके बदले में मीर ज़ाफर ने अंग्रेज़ों को बंगाल, बिहार और उड़ीसा में मुक्त व्यापार का अधिकार प्रदान किया तथा 24 परगना की ज़मींदारी भी प्रदान की गई। बंगाल की समस्त फ्राँसीसी बस्तियाँ अंग्रेज़ों के अधिकार में आ गईं। साथ ही, यह भी निश्चित हुआ कि भविष्य में अंग्रेज़ पदाधिकारियों तथा व्यापारियों को निजी व्यापार पर कोई चुंगी नहीं देनी होगी।
- प्लासी का युद्ध एक छोटी-सी झड़प थी, जिसका कोई सामरिक महत्त्व नहीं था। अंग्रेज़ों ने इस युद्ध में किसी सैनिक योग्यता का प्रदर्शन नहीं किया था, बल्कि राजनीतिक षड्यंत्रों तथा विश्वासघातियों के बल पर प्लासी के युद्ध को जीता था। के.एम. पणिक्कर के अनुसार, यह एक युद्ध न होकर सौदा था, जिसमे बंगाल के धनी सेठों तथा मीर ज़ाफर ने नवाब को अंग्रेज़ों के हाथों बेच डाला।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 3

मराठों पर नियंत्रण
(Control over Marathas)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'मराठों पर नियंत्रण तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- आंग्ल-मराठा संघर्ष
  - ➤ प्रथम आंग्ल-मराठा युद्ध
  - ➤ द्वितीय आंग्ल-मराठा युद्ध
  - ➤ तृतीय आंग्ल-मराठा युद्ध
- मराठों की असफलता के कारण
  - ➤ आपसी गुटबंदी और असंगठित मराठा संघ
  - ➤ मराठों की युद्ध नीति
  - ➤ योग्य नेतृत्व का अभाव
  - ➤ अंग्रेज़ों की उत्तम कूटनीति

आंग्ल-मराठा संघर्ष (Anglo–Maratha Struggle)

- मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् क्षेत्रीय शक्तियों में मराठा प्रभावशाली होकर उभर रहे थे तो वहीं अंग्रेज़ बंगाल विजय के पश्चात् यूरोपीय शक्तियों में अपनी सर्वोच्चता सिद्ध कर चुके थे।
- मराठा शक्ति के उभार ने यह निश्चित कर दिया कि भारत में ब्रिटिश सत्ता की स्थापना के लिए यह अनिवार्य था कि अंग्रेज़ों का मराठों के साथ संघर्ष हो। इसी परिप्रेक्ष्य में अंग्रेज़ों ने मराठों के साथ तीन युद्ध लड़े तथा भारत में ब्रिटिश सत्ता को सुदृढ़ किया।
- मराठवाड़ा क्षेत्र पर ब्रिटिश हस्तक्षेप का मुख्य कारण वाणिज्यिक हितों से संबंधित था। 1784 ई. के पश्चात् चीन के साथ ब्रिटिश कंपनी के कपास के व्यापार हेतु तथा गुजरात और बॉम्बे के तट से होने वाली व्यापारिक गतिविधियों ने मराठा क्षेत्र में अंग्रेज़ों की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं को बढ़ाने में अहम भूमिका निभाई।

प्रथम आंग्ल-मराठा युद्ध (First Anglo-Maratha War)] 1775-82 ई.

- मराठा संघ के प्रमुख के लिए जब मराठों का आंतरिक संघर्ष शुरू हुआ तब अंग्रेज़ों को मराठों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का अवसर प्राप्त हुआ।
- 1761 ई. में पानीपत की लड़ाई के पश्चात् पेशवा बने माधवराव प्रथम ने मराठा शक्ति को पुनर्गठित किया। किंतु, शीघ्र ही 1772 ई. में पेशवा माधवराव की मृत्यु के पश्चात् मराठों में गृह कलह प्रारंभ हो गई तथा माधवराव के पुत्र नारायणराव पेशवा बने, किंतु 1773 ई. में चाचा रघुनाथराव ने उसकी हत्या करवा दी।
- इसके पश्चात् नाना फड़नवीस के नेतृत्व में सरदारों ने रघुनाथराव का विरोध किया तथा नारायणराव के पुत्र माधवराव द्वितीय को पेशवा घोषित किया गया। उपर्युक्त परिस्थिति में रघुनाथराव ने 1775 ई. में अंग्रेज़ों से सूरत की संधि की।
- सूरत की संधि के अनुसार, अंग्रेज़ रघुनाथराव को पेशवा के पद पर प्रतिष्ठित करने हेतु सैन्य सहायता प्रदान करेंगे, तो वहीं सालसेट और बसीन का क्षेत्र तथा भड़ौच और सूरत की आय पर अंग्रेज़ों का अधिकार होगा।
- इन्हीं परिस्थितियों में प्रथम आंग्ल-मराठा युद्ध 1775-82 ई. के मध्य लड़ा गया तथा 1782 ई. में यह युद्ध अनिर्णायक सिद्ध होते हुए सालबाई की संधि से समाप्त हुआ।
- इस संधि से सालसेट, एलीफेंटा द्वीप और थाणे का दुर्ग अंग्रेज़ों को प्राप्त हुआ तथा माधवराव द्वितीय को पेशवा स्वीकार किया गया। दोनों पक्षों ने युद्धकाल के दौरान जीते गए प्रदेश एक-दूसरे को वापस कर दिए तथा भविष्य में एक-दूसरे पर आक्रमण न करने का आश्वासन दिया। साथ ही, रघुनाथराव को 3.5 लाख रुपए वार्षिक पेंशन देना स्वीकार किया गया।
- पेशवा माधवराव द्वितीय के समय में ही मार्च, 1795 ई. में खर्दा के युद्ध में मराठों ने निजाम को पराजित किया।

द्वितीय आंग्ल-मराठा युद्ध (Second Anglo-Maratha War), 1803-05 ई.

- 1800 ई. में नाना फड़नवीस की मृत्यु के पश्चात् मराठा क्षेत्र में अनिश्चितता का वातावरण था। साथ ही, यह दौर फ्राँसीसी भय से भी युक्त था। इसी समय 1798 ई. में वेलेजली गवर्नर जनरल बनकर भारत आया, जो कि साम्राज्यवादी हितों का पोषक था।
- इसी संदर्भ में लॉर्ड वेलेजली ने भारतीय भू-भाग में नेपोलियन के खतरे से निपटने हेतु भारतीय राज्यों के अधिग्रहण के लिए सहायक संधि प्रणाली का विकास किया।
- 1801 ई. में पेशवा बाजीराव द्वितीय ने जसवंतराव होल्कर के भाई बिट्‌ठू जी की हत्या कर दी फलतः 1802 ई. में होल्कर ने पूना पर आक्रमण कर पेशवा और सिंधिया की संयुक्त सेना को हदपसर नामक स्थान पर परास्त कर दिया।
- पूना पर होल्कर का नियंत्रण होने के पश्चात् बाजीराव द्वितीय ने बसीन में अंग्रेज़ो की शरण ली तथा 1802 ई. में बसीन की संधि के रूप में सहायक संधि की गई। बसीन की संधि के अनुसार-
  - ➤ पेशवा ने ब्रिटिश संरक्षण के अंतर्गत पूना में भारतीय और ब्रिटिश सेना को रखना स्वीकार किया।
  - ➤ ईस्ट इंडिया कंपनी को सूरत नगर प्रदान किया गया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 4

सिंध, पंजाब एवं अवध विजय
(Sindh, Punjab and Awadh Conquest)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'सिंध, पंजाब एवं अवध विजय तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- सिंध विजय
- पंजाब विजय
  - रणजीत सिंह
  - प्रथम आंग्ल-सिख युद्ध
  - द्वितीय आंग्ल-सिख युद्ध
- अवध
- सहायक संधि प्रणाली
- व्यपगत सिद्धांत/विलय नीति

सिंध विजय (Victory over Sindh), 1843 ई.

- 18वीं सदी में, सिंध पर कल्लौरा सरदारों का शासन था। 1770 ई. के दशक में, तालपुरों की बलूच जनजाति पहाड़ी क्षेत्रों से सिंध के मैदानी इलाकों में आकर बस गई। 1783 ई. में, तालपुर जनजाति ने मीर फतेह अली खान के नेतृत्व में कल्लौरा वंश को अपदस्थ कर सिंध पर पूर्ण अधिकार जमा लिया।
- 1800 ई. में मीर फतह अली की मृत्यु के पश्चात् इसके भाइयों ने सिंध को तीन भागों (हैदराबाद, मीरपुर और खैरपुर) में विभाजित कर आपस बांट लिया और 'अमीर' की उपाधि धारण कर स्वतंत्र रूप से शासन करने लगे, ये अफगानिस्तान की नाममात्र की अधीनता स्वीकार करते थे।
- उल्लेखनीय है कि सिंध की व्यापारिक एवं नौगम्यता के महत्त्व के कारण ब्रिटिश इस क्षेत्र पर अपना प्रभुत्त्व स्थापित करना चाहते थे।
- इसी क्रम में, जून 1807 ई. में नेपालियन तथा रूस के साथ टिलसित की संधि के पश्चात् ब्रिटिशों के पूर्वी साम्राज्य पर फ्राँसिसी आक्रमण की आशंका को बढ़ा दिया, तत्पश्चात् लॉर्ड मिंटो ने 1809 ई. में सिंध के अमीरों के साथ 'शाश्वत मित्रता' की संधि की। इसके तहत यह सुनिश्चित किया गया कि सिंध में फ्राँसीसियों को बसने की अनुमति नहीं दी जाएगी।
- सिंध की नौगम्य महत्ता के कारण 'बोर्ड ऑफ कंट्रोल' के प्रधान लॉर्ड एलनबरो की आज्ञा पर अलेक्ज़ेंडर बर्न्स सिंधु नदी की खोज करने के उद्देश्य से जलमार्ग से लाहौर पहुँचा। बर्न्स की नौकाओं को देखकर सिंध के एक सैय्यद ने यह कहते हुए दुःख प्रकट किया कि "अंग्रेज़ों ने सिंध विजय का राजमार्ग देख लिया," जो कालांतर में सही सिद्ध हुई।
- 1832 ई. को विलियम बैंटिक द्वारा भेजे गए कर्नल पोंट्टीगर ने सिंध के अमीरों के साथ एक संधि हस्ताक्षरित की। इसके अंतर्गत, अंग्रेज़ व्यापारियों एवं यात्रियों को सिंध से होकर आवागमन के साथ-साथ व्यापारिक उद्देश्यों के लिए सिंधु नदी का प्रयोग करने की अनुमति मिल गई, किंतु सैन्य सामग्री एवं युद्धपोतों के आवागमन प्रतिबंधित होंगे। साथ ही, कोई भी अंग्रेज़ व्यापारी सिंध में नहीं बसेगा और यात्रियों के लिए पासपोर्ट ज़रूरी होगा। प्रशुल्क दरें, अमीरों द्वारा परिवर्तित की जा सकेंगी और किसी प्रकार के सैन्य अधिभारों या कर की मांग सिंध से नहीं की जाएगी।
- 1836 ई. में लॉर्ड ऑकलैंड गवर्नर जनरल बना। भारत को रूसी प्रभाव से बचाने और सिंध पर अपना प्रभाव बढ़ाने व रणजीत सिंह की कार्रवाइयों को नियंत्रित करने के उद्देश्य से इसने सिंध के अमीरों के साथ अप्रैल 1838 ई. में एक संधि की। इसके तहत, अमीरों एवं सिखों के बीच होने वाले विवादों में हस्तक्षेप करने की ब्रिटिश भूमिका को स्वीकृति दी गई। साथ ही, ब्रिटिश रेजिडेंट की उपस्थिति को भी सुनिश्चित किया गया। इस प्रकार, सिंध 1838 ई. में ब्रिटिश संरक्षित क्षेत्र बन गया।
- इसी क्रम में, लॉर्ड ऑकलैंड ने जून 1838 ई. में शाहशुजा और रणजीत सिंह के साथ त्रिदलीय संधि किया। इसके अंतर्गत रणजीत सिंह ने अमीरों एवं सिखों के बीच होने वाले विवादों में ब्रिटिश हस्तक्षेप को स्वीकार कर लिया एवं शाहशुजा ने एक निश्चित धनराशि के बदले सिंध पर अपने अधिकार को त्याग दिए।
- 1839-42 ई. के दौरान हुए अफगान युद्ध में सिंध के अमीरों ने ब्रिटिश सेना को सहायता प्रदान की। इसके अंतर्गत सिंध के कुछ क्षेत्र तथा धन अंग्रेज़ों को दिया गया। इसके बावजूद अंग्रेज़ों ने सिंध पर प्रतिकूल आचरण का आरोप लगाकर सिंध विलय की रणनीति बनाई।
- 1842 ई. में ऑकलैंड के स्थान पर लॉर्ड एलनबरो गवर्नर जनरल बनकर भारत आए, जिन्होंने ऑकलैंड की भाँति सिंध विलय की रणनीति पर कार्य किया तथा अफगान युद्ध में मिली पराजय के बाद सिंध विजय को अनिवार्य माना। इस संदर्भ में चार्ल्स नेपियर ने लिखा कि " सिंध की विजय एक एकांकी घटना नहीं थी, यह तो अफगान तूफान की पूँछ थी।" साथ ही, सिंध के सामरिक और वाणिज्यिक महत्त्व ने भी सिंध विलय को आवश्यक बना दिया।
- 1842 ई. में मेजर आउट्रम के स्थान पर सर चार्ल्स नेपियर को सभी सैन्य व असैन्य अधिकार के साथ सिंध में ब्रिटिश कंपनी का रेजिडेंट नियुक्त किया गया। उसने सिंध के प्रति आक्रामक नीति का अनुसरण करते हुए जनवरी 1843 ई. में इमामगढ़, फरवरी 1843 ई. में मिआनी एवं मार्च 1843 ई. में दाबो के स्थान पर बलोचियों को पराजित किया। इस प्रकार, चार्ल्स नेपियर के नेतृत्व में ब्रिटिश सेना द्वारा अगस्त 1843 ई. में सिंध को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया गया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 5

ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव
(British Economic Policies and Their Impacts)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ एवं उनके प्रभाव तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- ब्रिटिश उपनिवेशवाद
  - भारत में उपनिवेशवाद के विभिन्न चरण
    - वाणिज्यिक पूंजीवादी चरण, 1757-1813 ई.
    - औद्योगिक पूंजीवादी चरण, 1813-1858 ई.
    - वित्तीय पूंजीवादी चरण, 1858 के पश्चात्

ब्रिटिशकालीन भू-राजस्व व्यवस्था
- पृष्ठभूमि
- स्थायी बंदोबस्त
- रैय्यतवाड़ी बंदोबस्त
- महालवाड़ी बंदोबस्त
- भू-राजस्व व्यवस्था का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव
- वि-औद्योगीकरण
- कृषि का वाणिज्यीकरण
- आधुनिक उद्योगों का विकास
- रेलवे का विकास
  - उद्देश्य
  - रेलवे के विकास के प्रेरक तत्त्व
  - रेलवे के विकास का परिणाम
- ब्रिटिश आर्थिक नीति का मूल्यांकन
- धन का निष्कासन
- ब्रिटिश भारत में अकाल नीति का विकास
  - पृष्ठभूमि
  - ब्रिटिश शासन में पड़ने वाले अकाल/दुर्भिक्ष
  - अकाल के कारण
  - अकाल दूर करने के संबंध में नीतियाँ
- भारत में बैंकिंग प्रणाली

ब्रिटिश उपनिवेशवाद (British Colonialism)

- उपनिवेशवाद शब्द का तात्पर्य एक विदेशी क्षेत्र पर प्रत्यक्ष शासन द्वारा विभिन्न प्रकार के लाभ उठाने से है। इसके अंतर्गत उपनिवेश देश के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों पर अधिकार करना तथा विदेशी आबादी को उपनिवेश में बसाना सम्मिलित है। लेनिन के अनुसार, "साम्राज्यवाद पूंजीवाद का चरम रूप है अर्थात् साम्राज्यवाद पूंजीवादी विकास का वह चरण है, जब एकाधिकार व वित्तीय पूंजी का प्रभुत्व स्थापित हो जाता है।"
- उपनिवेशवाद एक ऐसी संरचना है, जिसके माध्यम से मुख्य रूप से किसी भी देश का आर्थिक शोषण होता है। उपनिवेश प्राप्त करने की होड़ औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप शुरू हुई थी। भारत भी इसी दौरान ब्रिटेन का एक उपनिवेश बना जहाँ औपनिवेशिक नीतियों में परिवर्तन इंग्लैंड के आर्थिक ढ़ाँचे में आए परिवर्तन के परिणामस्वरूप संपन्न हुआ।
- रजनी पाम दत्त ने अपनी कृति 'इंडिया टुडे' में ब्रिटिशकालीन भारतीय औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का चित्रण किया है।

भारत में उपनिवेशवाद के विभिन्न चरण (Different Phases of Colonialism in India)

उपनिवेशवाद का केंद्रबिंदु आर्थिक शोषण है। इसके विभिन्न स्वरूप हो सकते हैं, जैसे-जैसे शोषण के स्वरूप में बदलाव आता है, औपनिवेशिक नीतियों में भी परिवर्तन होता रहता है। ब्रिटेन की आर्थिक संरचना के अनुरूप भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद विभिन्न चरणों से होकर गुज़रा और प्रत्येक चरण गुणात्मक दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न था।

वाणिज्यिक पूंजीवादी चरण, 1757-1813 ई. (Commercial Capitalist Phase, 1757-1813 AD)

- 1757 ई. में प्लासी के युद्ध के पश्चात् कंपनी ने बंगाल पर अपने प्रभुत्व की स्थापना की तथा भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद को स्थापित किया। ब्रिटिशों की साम्राज्यवादी मानसिकता को उपनिवेशवाद के प्रथम चरण के दौरान देखा गया, जिसे वाणिज्यिक पूंजीवादी चरण के रूप में जाना जाता है। इस चरण के दौरान अंग्रेज़ों का ध्यान आर्थिक लूट पर केंद्रित था। इसी आर्थिक लूट ने इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- इस चरण के दौरान ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत से अत्यधिक पूंजी का संग्रह किया तथा भारत के व्यापार पर कंपनी का एकाधिकार स्थापित हुआ। फलतः कंपनी ने भारत से वस्तुओं को कम कीमत पर खरीद कर यूरोप के बाज़ारों में अधिक कीमत पर बेचकर खूब लाभ कमाया।
- उपनिवेशवाद के प्रथम चरण के दौरान ही कंपनी ने भारत की सत्ता पर अपना नियंत्रण स्थापित करने हेतु क्षेत्रीय शक्तियों को परास्त कर अपने अधीन किया, ताकि विजित किए गए क्षेत्रों की सरकारी आय पर कंपनी का पूर्ण नियंत्रण स्थापित हो सके।
- साथ ही, अन्य यूरोपीय शक्तियों जैसे– फ्राँस, डच आदि को भी पराजित करके ब्रिटिश कंपनी ने भारत में एकाधिकार स्थापित किया, जिससे कि ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ प्रतिस्पर्द्धा करने वाली कोई अन्य ब्रिटिश अथवा यूरोपीय कंपनी न हो।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6

ब्रिटिश प्रशासनिक नीति
(British Administrative Policy)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'ब्रिटिश प्रशासनिक नीति तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- ब्रिटिशकालीन प्रशासनिक व्यवस्था का विकास
  - लोक (सिविल) सेवाओं का विकास
  - पुलिस प्रशासन
  - सैन्य व्यवस्था
  - ब्रिटिशकालीन न्यायिक व्यवस्था का विकास
  - वॉरेन हेस्टिंग्स के अधीन सुधार
  - कॉर्नवालिस के अधीन न्यायिक सुधार
  - विलियम बैंटिक के अधीन न्यायिक सुधार
  - क्राउन के अधीन न्यायिक विकास
- देशी रियासतों के प्रति ब्रिटिश नीति
  - भूमिका
  - घेरे की नीति
  - अधीनस्थ पार्थक्य की नीति
  - अधीनस्थ संघ की नीति
  - समान संघ की नीति
  - मूल्यांकन
- ब्रिटिशकालीन स्थानीय स्वशासन
  - पृष्ठभूमि
  - लॉर्ड मेयो के काल में स्थानीय स्वशासन
  - लॉर्ड रिपन के काल में स्थानीय स्वशासन
  - प्रस्ताव के प्रमुख बिंदु
  - विकेंद्रीकरण आयोग की रिपोर्ट, 1908
  - भारत सरकार अधिनियम, 1919 के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन
  - भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन
  - स्थानीय स्वशासन का विकास
  - स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्थानीय स्वशासन
- ब्रिटिशकालीन विदेश नीति
  - पृष्ठभूमि
  - ब्रिटिशकालीन विदेश नीति के लक्षण
  - ब्रिटिश भारत का सीमावर्ती देशों के साथ संबंध
    - आंग्ल-नेपाल संबंध
    - आंग्ल-बर्मा संबंध
    - आंग्ल-अफगान संबंध
    - आंग्ल-तिब्बत संबंध

ब्रिटिशकालीन प्रशासनिक व्यवस्था का विकास (Development of Administrative System during British Period)

भारतीय प्रशासनिक ढाँचा ब्रिटिश शासन की प्रशासनिक प्रणाली की ही विरासत है। भारतीय प्रशासन के विभिन्न अंग, जैसे– सिविल सेवाएँ, पुलिस व्यवस्था आदि का विकास ईस्ट इंडिया कंपनी के विकास के अनुरूप होता गया तथा 1857 ई. की क्रांति के पश्चात् भी इनमें कई परिवर्तन देखने को मिले।

लोक (सिविल) सेवाओं का विकास (Development of Civil Services)

- सिविल सेवा का उद्‌भव ईस्ट इंडिया कंपनी की व्यापारिक व्यवस्था का परिणाम था। 1765 ई. में कंपनी की सेवा में निम्नतम पद 'राइटर' का था जिसकी नियुक्ति डायरेक्टर्स द्वारा की जाती थी। इनका वेतन बहुत कम होने के कारण इन्हें कुछ निजी व्यापार की अनुमति थी। किंतु कंपनी के एक क्षेत्रीय शक्ति का रूप लेने के पश्चात् इसकी प्रशासकीय सेवा में भ्रष्ट्राचार एवं अनुशासनहीनता व्याप्त हो गई।
- लॉर्ड वॉरेन हेस्टिंग्स और लॉर्ड कॉर्नवालिस के प्रयासों के फलस्वरूप भारत में लोक सेवा का उदय हुआ। वॉरेन हेस्टिंग्स ने पहली बार लोक सेवा की स्थापना भू-राजस्व एकत्रित करने के उद्देश्य से की।
- भारत में सिविल सेवा के वर्तमान ढांचे की शुरुआत लॉर्ड कॉर्नवालिस द्वारा की गई। फरवरी, 1786 ई. में बंगाल का गवर्नर जनरल बनने के पश्चात् कॉर्नवालिस ने कंपनी की समग्र शासन व्यवस्था में सुधार के लिए 'कॉर्नवालिस संहिता' (Cornwallis Code) की रचना की, जिसके द्वारा राजस्व प्रशासन एवं न्यायिक प्रशासन को पृथक् किया गया।
- कॉर्नवालिस को भारत में 'सिविल सेवा का जनक' कहा जाता है। उसने कंपनी द्वारा नियुक्त सिविल सेवकों के निजी व्यापार पर पाबंदी लगाई तथा भ्रष्टाचार को रोकने का प्रयास किया।
- कॉर्नवालिस के बाद लॉर्ड वेलेज़ली ने सिविल सेवा में भर्ती हुए नए सदस्यों को प्रशिक्षण देने के लिए 'फोर्ट विलियम कॉलेज' की स्थापना की। किंतु, बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स (ब्रिटेन) ने इसे बंद करके 1806 ई. में इंग्लैंड में 'हैलीबरी कॉलेज' की स्थापना की, जिसमें चयनित अभ्यर्थियों को 2 वर्ष का प्रशिक्षण देने के बाद भारत भेजा जाता था।
- 1833 ई. के चार्टर एक्ट में घोषणा की गई कि भविष्य में सभी नियुक्तियाँ प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर होंगी और इसमें सभी लोग बिना किसी भेदभाव के बैठ सकेंगे, किंतु इस प्रावधान का पूर्णत: पालन नहीं किया गया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 7

ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियाँ (British Socio-Cultural Policies)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- पृष्ठभूमि
  - ➤ प्रथम चरण, 1772-1813 ई.
  - ➤ द्वितीय चरण, 1813-1857 ई.
  - ➤ तृतीय चरण, 1857-1885 ई.
  - ➤ चतुर्थ चरण, 1885 ई. के बाद
- ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों का प्रभाव
- शिक्षा नीति
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रसार के कारण
  - ➤ ईसाई मिशनरियों के आरंभिक प्रयास
  - ➤ प्राच्यवादी तथा पाश्चात्यवादी विवाद
  - ➤ मैकाले का स्मरण-पत्र
  - ➤ वुड का घोषणा-पत्र, 1854 ई.
  - ➤ हंटर शिक्षा आयोग, 1882-83 ई.
  - ➤ भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम, 1904 ई.
  - ➤ शिक्षा नीति पर सरकारी प्रस्ताव, 1913 ई.
  - ➤ सैडलर विश्वविद्यालय आयोग, 1917-19 ई.
  - ➤ हार्टोग समिति, 1929 ई.
  - ➤ वर्धा मूल शिक्षा योजना, 1937 ई.
  - ➤ सार्जेंट योजना, 1944 ई.
  - ➤ राधाकृष्णन आयोग, 1948-49 ई.
  - ➤ कोठारी शिक्षा आयोग, 1964-66 ई.
  - ➤ राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 ई.
  - ➤ पाश्चात्य शिक्षा का भारत पर प्रभाव
  - ➤ ब्रिटिशकालीन शिक्षा एवं राष्ट्रवाद का उदय
- भारत में प्रेस का विकास
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ समाचार-पत्रों का विकास
  - ➤ प्रेस से संबंधित अधिनियम
  - ➤ प्रेस नियंत्रण अधिनियम
  - ➤ द लाइसेंसिंग रेगुलेशन एक्ट
  - ➤ लिबरेशन ऑफ द इंडियन प्रेस एक्ट (मेटकॉफ अधिनियम), 1835 ई.
  - ➤ 1857 ई. का अनुज्ञप्ति अधिनियम
  - ➤ पंजीकरण अधिनियम, 1867 ई.
  - ➤ वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट, 1878 ई.
  - ➤ आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1898 ई.
  - ➤ समाचार-पत्र अधिनियम, 1908 ई.
  - ➤ भारतीय प्रेस अधिनियम, 1910 ई.
  - ➤ भारतीय प्रेस (संकटकालीन शक्तियाँ) अधिनियम, 1931 ई.
  - ➤ समाचार-पत्र जाँच समिति, 1947 ई.
  - ➤ प्रेस आयोग
  - ➤ समाचार-पत्रों की भूमिका एवं प्रभाव

पृष्ठभूमि (Background)

ब्रिटेन की स्थिति (18वीं सदी के दौरान)

औद्योगिक क्रांति
- औद्योगिक पूंजीवाद, सामाजिक पहलुओं में परिवर्तन, नवीन विचारों का उदय, बाज़ार की आवश्यकता, भारत का आधुनिकीकरण
- परिणामस्वरूप : पाश्चात्य शिक्षा का प्रादुर्भाव

1813 ई. तक : अहस्तक्षेप नीति
- 1813 ई. के पश्चात् : रूपांतरण का प्रयास

- ब्रिटिश भारत में साम्राज्य विस्तार के क्रम में जब भारतीय अर्थव्यवस्था एवं प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित हो रहा था, तब ब्रिटिश सरकार के समक्ष एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह था कि भारतीय समाज और संस्कृति के प्रति ब्रिटिश नीति कैसी होनी चाहिए? अतएव ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतीय समाज की परंपराओं, विधानों एवं संस्कृति के प्रति एक सक्रिय नीति का विकास हुआ, जिसे साम्राज्यवादी या औपनिवेशिक सामाजिक-सांस्कृतिक नीति कहते हैं।
- यद्यपि ब्रिटिशों द्वारा अपनाई गईं सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियाँ समय के अनुरूप परिवर्तनशील रहीं, तथापि इनका एकमात्र लक्ष्य ब्रिटिश हितों से संलग्नता था।
- इस प्रकार, ब्रिटिश सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों के परिवर्तनशील स्वरूप के अनुसार इन्हें चार चरणों में विभक्त किया जा सकता है–

प्रथम चरण (First Phase), 1772-1813 ई.

- कंपनी शासन के इस चरण में ब्रिटिश साम्राज्य का क्षेत्रीय विस्तार हो रहा था, इस दौरान ब्रिटिश सरकार ने अपनी साम्राज्यवादी रणनी. तियों को ध्यान में रखते हुए भारतीयों के सामाजिक-सांस्कृतिक मामलों के प्रति अति उदासीन एवं अहस्तक्षेप की नीति अपनाई।
- कंपनी शासन की इस उदासीनता का मुख्य कारण, कंपनी का अपने व्यावसायिक हितों पर केंद्रित रहना था। साथ ही, भारत की धर्म-संस्कृति एवं प्रथा-परंपराएँ भारतीय जनमानस के लिए जीने-मरने का प्रश्न थी, अतः इनमें हस्तक्षेप करके कंपनी अपने लिए खतरा मोल नहीं लेना चाहती थी।
- उपर्युक्त विचारों के बावजूद ब्रिटिशों द्वारा कुछ प्रयास किए गए, जिनमें बंगाल अधिनियम, 1795 ई. की धारा 21 तथा 1804 ई. के अधिनियम की धारा 3 द्वारा शिशु वध को प्रतिबंधित करना

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 8

भारतीय प्रतिक्रिया
(Indian Response)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'भारतीय प्रतिक्रिया तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

जनजातीय विद्रोह
- पृष्ठभूमि
- जनजातीय विद्रोह के प्रमुख कारण
- प्रमुख जनजातीय विद्रोह
- जनजातीय विद्रोह का स्वरूप
- जनजातीय विद्रोह की सीमाएँ

कृषक विद्रोह
- पृष्ठभूमि
- कृषक विद्रोह के प्रमुख कारण
- कृषक विद्रोह के विभिन्न चरण
- कृषक आंदोलनों का स्वरूप
  - ➤ 19वीं सदी के कृषक विद्रोह का स्वरूप
  - ➤ 20वीं सदी के किसान आंदोलनों का स्वरूप
- किसान आंदोलनों की उपलब्धियाँ

1857 ई. का विद्रोह
- पृष्ठभूमि
- विद्रोह के कारण
- विद्रोह का स्वरूप
- विद्रोह का आरंभ एवं प्रसार
- विद्रोह के प्रमुख केंद्र
- विद्रोह का परिणाम एवं प्रभाव
- विद्रोह की विफलता के कारण

श्रमिक संघ आंदोलन
- पृष्ठभूमि
- श्रमिक संघों के गठन के कारण
- भारत में श्रमिक आंदोलन का आरंभ एवं विकास
- 19वीं सदी में श्रमिक आंदोलन
- 19वीं सदी में पारित श्रमिक सुधार संबंधी प्रमुख विधान
- 20वीं सदी में श्रमिक आंदोलन
  - ➤ एटक (AITUC) की स्थापना
  - ➤ मेरठ षड्यंत्र केस
- 20वीं सदी में पारित श्रमिक सुधार संबंधी प्रमुख विधान

जनजातीय विद्रोह (Tribal Revolt)

पृष्ठभूमि (Background)

- भारत के विभिन्न भागों में बसने वाले जनजातीय समूहों ने ब्रिटिश शासन के दौरान अनेक बार सशस्त्र संघर्ष किया। इन विद्रोहों में उन्होंने अत्यंत जुझारू संघर्ष करते हुए असीम शौर्य व बलिदान का परिचय दिया। परंतु, दूसरी ओर सरकार ने इन विद्रोहों को समाप्त करने के क्रम में क्रूरता की सारी सीमाएँ तोड़ दीं और बर्बरतापूर्वक इनका दमन कर दिया।
- आमतौर पर आदिवासी शेष समाज से अपने-आप को पृथक् रखते थे, लेकिन ब्रिटिश सरकार ने उनको पूरी तरह से अपनी औपनिवेशिक नीति में शामिल करते हुए उनकी विशिष्ट भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया, परिणामस्वरूप जनजातियों द्वारा औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध जनजातीय आंदोलन का आरंभ हो गया। इनका चरित्र अन्य सामुदायिक आंदोलनों से भिन्न, एकांकी और हिंसक था।
- इस प्रकार, ब्रिटिश सेना और जनजातियों के बीच हुए सशस्त्र विद्रोह पूरी तरह दो गैर-बराबर पक्षों के बीच का संघर्ष था, क्योंकि यहाँ पर एक तरफ तो आधुनिकतम हथियारों एवं प्रशिक्षण से युक्त ब्रिटिश सेना थी और दूसरी तरफ तीर-धनुष, भाले, पत्थर आदि के सहारे संघर्षशील आदिवासी पुरुष व औरतें, जिन्हें यह विश्वास था कि उनके नेता के पास ईश्वरीय ताकत है। अतएव गैर-बराबरी के इस युद्ध में लाखों की संख्या में आदिवासी मारे गए।

जनजातीय विद्रोह के प्रमुख कारण (Major Causes of Tribal Revolt)

- **सामाजिक हस्तक्षेप (Social Intervention) :** आदिवासी क्षेत्रों में ब्रिटिश प्रशासन एवं बाहरी लोगों (महाजन, साहूकार, व्यापारी वर्ग) की घुसपैठ से आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में बदलाव आया। उनकी ज़मीन से उनके अधिकार छीन लिए गए और वे धीरे-धीरे किसान से खेतिहर मज़दूर बन गए। आदिवासी क्षेत्रों में ईसाई मिशनरियों के बढ़ते हस्तक्षेप के कारण इनके पारंपरिक धर्म एवं संस्कृति को क्षति पहुँची, फलतः आदिवासियों में असंतोष की भावना उत्पन्न हुई।
- **अत्यधिक करारोपण एवं भू-राजस्व की वसूली (Excessive Taxation and Realization of Land Revenue) :** जनजातीय लोगों में खुंटकट्टी अधिकार (सामूहिक संपत्ति की अवधारणा) की परंपरा प्रचलित थी, जबकि ब्रिटिश सरकार ने आदिवासी कबीलों के सरदारों को ज़मीदारों के रूप में मान्यता प्रदान कर भू-राजस्व की नई प्रणाली लागू कर दी। साथ ही, आदिवासियों द्वारा उत्पादित अन्य वस्तुओं पर भी अनेक प्रकार के कर लगाए गए। चावल की कम नशीली शराब पर 1822 ई. में उत्पाद शुल्क एवं 1827 ई. में पोस्त की जबरन खेती की शुरुआत कर अफीम पर कर आरोपित किया गया। इसके अतिरिक्त, आदिवासियों पर नमक कर भी लगा दिया गया। इन सब परिवर्तनों से आदिवासियों में असंतोष उत्पन्न हुआ, जिसकी परिणति विद्रोह के रूप में हुई।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 9	सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन (Socio-Religious Reform Movements)

इकाई 9: सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन (Socio-Religious Reform Movements)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- पृष्ठभूमि
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के कारण
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों का स्वरूप
- समाज सुधारकों द्वारा अपनाए गए प्रमुख साधन
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन का योगदान
- सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन की सीमाएँ
- 19वीं सदी के प्रमुख सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन
- स्वामी विवेकानंद एवं रामकृष्ण मिशन
- थियोसोफिकल सोसाइटी
- मुस्लिम धर्म सुधार आंदोलन
- सिख सुधार आंदोलन
- जाति सुधार आंदोलन
- अन्य प्रमुख आंदोलन
- समाज सुधार के केंद्र में महिलाएँ
- सामाजिक-धार्मिक सुधारों के प्रति कांग्रेस का दृष्टिकोण

पृष्ठभूमि (Background)

- भारतीय इतिहास में 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध का काल सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के रूप में जाना जाता है।
- ब्रिटिश कंपनी द्वारा शुरू की गई सामाजिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक प्रणाली ने भारतीय समाज को गहराई से प्रभावित किया, जिससे प्राचीन एवं नवीन व्यवस्था के मध्य संघर्ष बढ़ा।
- अंग्रेज़ों द्वारा भारत में किए जा रहे पश्चिमी सांस्कृतिक प्रसार ने भारतीय समाज के आधारभूत ढाँचे में परिवर्तन को बढ़ावा दिया, जिसकी परिणति सामाजिक सुधार आंदोलनों के रूप में देखने को मिली।
- 19वीं सदी का भारतीय समाज धार्मिक अंधविश्वासों एवं सामाजिक कुरीतियों से जकड़ा हुआ था। भारत में पाश्चात्य शिक्षा का आरंभ भी इन सुधार आंदोलनों के उदय में सहायक सिद्ध हुआ।
- भारतीय नवशिक्षित वर्ग ने पाश्चात्य लोकतंत्र, स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय के आधारभूत सिद्धांतों के साथ-साथ तर्कवाद, विज्ञानवाद एवं मानवतावादी मूल्यों को अपनाया।
- इस वर्ग ने तत्कालीन भारतीय समाज की कुरीतियों एवं बुराइयों को नष्ट करने, अतीत के गौरवशाली इतिहास का बोध कराने एवं उसकी पुनर्व्याख्या करने हेतु प्रेरित किया।।

सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन के उदय के कारण (Causes for the Rise of Socio-Religious Reform Movements)

औपनिवेशिक सामाजिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था (Colonial Social, Economic and Administrative System)

- ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय समाज के आधारभूत ढाँचे में आमूल-चूल परिवर्तन हुए।
- औपनिवेशिक नीतियों ने भारतीय परंपरागत जीवनशैली, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को अत्यधिक प्रभावित किया। साथ ही, जाति प्रथा कमज़ोर हुई।
- फलतः भारतीयों के बीच एकता बढ़ी और सुधारवादी आंदोलन की पृष्ठभूमि तैयार करने में सहायक हुई।

तार्किक, वैज्ञानिक व मानवतावादी दृष्टिकोण का विकास (Development of Logical, Scientific and Humanistic Approach)

- 18वीं सदी में यूरोप में एक नवीन बौद्धिक चेतना का प्रसार हुआ, फलस्वरूप जागृति के एक नए युग का सूत्रपात हुआ। विज्ञान, तर्कवाद एवं अन्वेषण की भावना से युक्त समाज ने अत्यधिक प्रगति की। ब्रिटिश शासन के दौरान हो रहे पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार ने भारत के नवीन शिक्षित वर्ग को भी (तर्कवाद, विज्ञानवाद, मानतावाद आदि प्रगतिशील मूल्यों से) गंभीर रूप से प्रभावित किया।
- इन पाश्चात्य शिक्षित भारतीयों ने इस नवज्ञान से प्रभावित होकर सामाजिक एवं धार्मिक सुधार का कार्य प्रारंभ किया।
- तर्कवाद, नवचेतना के आधार पर 19वीं सदी के आरंभ में परिवर्तन की जिस प्रक्रिया का सूत्रपात हुआ, इसे भारतीय पुनर्जागरण की संज्ञा प्रदान की जाती है।

पाश्चात्य आधुनिक शिक्षा (Western Modern Education)

- पश्चिमी शिक्षा ने सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। पाश्चात्य शिक्षित वर्ग ने लोकतंत्र, स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय के आधारभूत सिद्धांतों को अपनाते हुए समाज में व्याप्त तत्कालीन बुराइयों को नष्ट करने का प्रयास किया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 10

राष्ट्रीय आंदोलन
(National Movement)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'राष्ट्रीय आंदोलन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- भारत में राष्ट्रवाद का उदय
  - पृष्ठभूमि
  - राष्ट्रवाद के उदय के कारण
- कांग्रेस के गठन से पूर्व की स्थापित प्रमुख संस्थाएँ
  - बंगाल में राजनीतिक संस्थाएँ
  - बंबई में राजनीतिक संस्थाएँ
  - मद्रास में राजनीतिक संस्थाएँ
  - कांग्रेस से पूर्ववर्ती आंदोलन
  - पूर्ववर्ती संस्थाओं की सीमाएँ
- भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना
  - भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उद्देश्य
  - कांग्रेस की उत्पत्ति से संबंधित मतभेद
  - कांग्रेस के प्रति विभिन्न वर्गों की प्रतिक्रिया
- राष्ट्रीय आंदोलन का प्रथम चरण
  - उदारवादियों की कार्यप्रणाली
  - उदारवादियों की प्रमुख मांगें
  - उदारवादी काल में जनसाधारण की भूमिका
  - उदारवादियों की उपलब्धियाँ
  - उदारवादियों की सीमाएँ
- भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का द्वितीय चरण/उग्रवादी आंदोलन, 1905-1913 ई.
  - उग्रवाद के उदय के कारण
  - सैद्धांतिक आधार एवं कार्यपद्धति
  - उग्रवादियों का योगदान
  - उग्रवादी आंदोलन की सीमाएँ
  - उदारवादी तथा उग्रवादी आंदोलनों में अंतर

भारत में राष्ट्रवाद का उदय (Rise of Nationalism in India)

पृष्ठभूमि (Background)

भारतीय इतिहासकारों ने भारतीय राष्ट्रवाद के उदय को ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीतियों और ब्रिटिश शासन द्वारा स्थापित संस्थाओं, विचारों व संसाधनों से उपजी प्रेरणा के प्रति भारतीय प्रतिक्रिया के परिणाम को बताया है। प्रसिद्ध लेखक रजनी पाम दत्त ने अपनी पुस्तक 'इंडिया टुडे' (1940 ई.) में भारतीय राष्ट्रवाद को ब्रिटिश शासन की संतान और इसका परिणाम कहा है। दूसरे शब्दों में, कह सकते हैं कि भारतीय राष्ट्रवाद औपनिवेशिक नीतियों तथा कुछ सीमा तक उस नीति की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप ही उभरा। किंतु, विभिन्न परिस्थितियों एवं कारकों के समग्र विश्लेषण के पश्चात् कहा जा सकता है कि भारत में राष्ट्रवाद का उदय किसी एक कारण या परिस्थिति का परिणाम न होकर विभिन्न कारकों का सम्मिलित प्रतिफल था।

- भारत में आधुनिक राष्ट्रवाद का उदय 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुआ। दरअसल, भारतीयों में राष्ट्रीय चेतना का उद्‌भव ब्रिटिश सरकार की औपनिवेशिक नीतियों एवं कुशासन का परिणाम था। सरकार ने जो परिवर्तन आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र में किए थे, उसके परिणामस्वरूप भारतीय जनमानस का अत्यधिक शोषण हुआ; जिससे जनता में असंतोष की भावना ने एक व्यापक रूप ले लिया।
- दूसरी तरफ, अंग्रेज़ों ने पाश्चात्य शिक्षा, डाक और तार-व्यवस्था, रेल, छापेखाने (प्रिंटिंग प्रेस) तथा एकीकृत प्रशासनिक प्रणाली आदि का विकास किया। यद्यपि, इनका विकास व्यवस्थित एवं सुचारु रूप से प्रशासनिक संचालन की दृष्टि से किया गया था, तथापि इन सभी ने राष्ट्रीय चेतना के उद्‌भव एवं विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- भारत में 19वीं सदी में हुए सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों ने भी राष्ट्रवाद की भावना के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- इसी क्रम में दिसंबर 1885 ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई, जिसके नेतृत्व में एक संगठित राष्ट्रीय आंदोलन का सूत्रपात हुआ। अंततः 15 अगस्त, 1947 को भारत एक स्वतंत्र देश के रूप में विश्व पटल पर स्थापित हुआ।

राष्ट्रवाद के उदय के कारण (Causes of the Rise of Nationalism)

भारत में राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना अथवा राष्ट्रवाद का उदय अनेक कारकों एवं परिस्थितियों का परिणाम था, जिन्हें निम्न रूपों में देखा जा सकता है-

ब्रिटिश शासन की औपनिवेशिक प्रकृति

ब्रिटिश शासन ने भारत में पकड़ मज़बूत करने के उद्देश्य से तथा भारत के आर्थिक दोहन के लिए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैचारिक सभी क्षेत्रों में सुधार करने का प्रयत्न किया। उन्होने भारत का आंशिक आधुनिकीकरण करने का प्रयास किया जिसका एक महत्त्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव भारत में राष्ट्रवाद के उदय के रूप में प्रतिफलित हुआ।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 11 बंगाल विभाजन
(Bengal Partition)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'बंगाल विभाजन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- परिचय
- स्वदेशी आंदोलन
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ आंदोलन के कार्यक्रम
  - ➤ आंदोलन का प्रसार एवं उसकी विशेषताएँ
  - ➤ स्वदेशी आंदोलन का प्रभाव
  - ➤ स्वदेशी आंदोलन का अंत एवं असफलता के कारण
  - ➤ बंगाल विभाजन का निरस्तीकरण
- कांग्रेस का विभाजन/सूरत अधिवेशन, 1907 ई.
- होमरूल आंदोलन, 1916 ई.
  - ➤ परिचय
  - ➤ आंदोलन के आरंभ होने के कारण
  - ➤ आंदोलन के उद्देश्य
  - ➤ आंदोलन की उत्पत्ति एवं प्रसार
  - ➤ आंदोलन के कार्यक्रम
  - ➤ आंदोलन का अंत एवं उसका कारण
  - ➤ आंदोलन की उपलब्धियाँ
- कांग्रेस का लखनऊ अधिवेशन 1916 ई.
  - ➤ उग्रवाद का कांग्रेस में पुन: प्रवेश
  - ➤ कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के मध्य समझौता

परिचय (Introduction)

- बंगाल विभाजन (1905 ई.) तत्कालीन वायसराय लॉर्ड कर्ज़न द्वारा किया गया सर्वाधिक विवादास्पद कृत्य था। वस्तुत: यह उसकी 'फूट डालो और राज करो' की नीति का ही एक अंग था। इसका प्रमुख उद्देश्य राष्ट्रवादी आंदोलन को कमजोर करना था।
- दरअसल, बंगाल विभाजन की पृष्ठभूमि 1905 ई. से पहले से ही बन चुकी थी। गृह सचिव रिजले द्वारा सर्वप्रथम 3 दिसंबर, 1903 को बंगाल विभाजन का प्रस्ताव लाया गया, जिसे लेफ्टिनेंट गवर्नर फ्रेजर और वायसराय कर्ज़न द्वारा अंतिम रूप दिया गया। इसके पीछे यह तर्क दिया गया कि बंगाल की विशाल आबादी के कारण प्रशासनिक व्यवस्था सुचारु रूप से नहीं चल पा रही है, अत: इसके कुशल संचालन हेतु बंगाल का विभाजन करना आवश्यक है। हालाँकि, इसका मुख्य उद्देश्य तो भारतीय राष्ट्रवाद का प्रमुख केंद्र बन चुके बंगाल का विभाजन करके राष्ट्रीय आंदोलन को तितर-बितर करना था। अत: कर्ज़न ने भारतीय राष्ट्रवाद के देशव्यापी प्रसार एवं प्रभाव को नियंत्रित करने के उद्देश्य से इस निर्णय को लागू कर अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया।
- बंगाल प्रेसीडेंसी ब्रिटिश भारत का सर्वाधिक जनसंख्या वाला प्रांत था, जिसमें उड़ीसा एवं बिहार सहित पश्चिमी और पूर्वी बंगाल (आधुनिक बांग्लादेश) शामिल थे। यद्यपि, कर्ज़न द्वारा बंगाल विभाजन के पीछे दिया गया उक्त तर्क कुछ हद तक ठीक था, परंतु उसकी वास्तविक मंशा बंगाल में मज़बूत हो रहे राष्ट्रवाद की धारा को कमज़ोर करने की थी।
- लंदन में कर्ज़न ने बंगाल विभाजन के राजनीतिक उद्देश्यों की चर्चा करते हुए अपने अधिकारियों से कहा था कि "मैं विभाजन द्वारा विरोधियों के संगठित समूह को तोड़ना चाहता हूँ। अविभाजित बंगाल एक महाशक्ति है, जिसे विभाजन द्वारा खंडित कर दिया जाएगा।"
- विभाजन की योजना के तहत बंगाल को पश्चिमी एवं पूर्वी दो भागों में विभाजित किया गया। ध्यातव्य है कि विभाजन की यह प्रक्रिया भाषायी एवं धार्मिक जनगणना के आँकड़ों को ध्यान में रखकर की गई थी।
- मूल बंगाल में बंगाली भाषी ही अल्पसंख्यक (1 करोड़, 70 लाख) हो गए, जबकि हिंदी और उड़िया भाषी बहुसंख्यक (3 करोड़, 70 लाख) हो गए।
- पूर्वी बंगाल एवं असम को मिलाकर एक प्रांत का गठन किया गया, जिसमें ढाका सहित राजशाही, चटगाँव, मालदा आदि ज़िले शामिल थे। इस प्रांत की कुल जनसंख्या लगभग 3 करोड़ 10 लाख थी, जिसमें लगभग 1 करोड़ 80 लाख मुस्लिम तथा 1 करोड़ 20 लाख हिंदू आबादी थी। इस प्रकार यह मुस्लिम बहुल प्रांत बन गया। मुसलमानों के प्रति स्नेह दिखाते हुए कर्ज़न ने इस प्रांत की राजधानी ढाका को बनाया और कहा कि इससे मुसलमानों में एकता बढ़ेगी, जो कि मुगल शासकों के दौरान उनमें पाई जाती थी।
- पश्चिमी बंगाल में आधुनिक पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग एवं कलकत्ता सहित 11 ज़िले एवं संपूर्ण बिहार और उड़ीसा को शामिल किया गया। इस प्रांत की कुल जनसंख्या 5 करोड़ 40 लाख थी, जिसमें 4 करोड़ 20 लाख हिंदू तथा 90 लाख मुसलमान थे। इस प्रकार यह नवगठित प्रांत हिंदू बहुल आबादी का प्रतिनिधित्व करता था।
- भारतीयों द्वारा देशव्यापी विरोध के बावजूद कर्ज़न द्वारा बंगाल विभाजन के निर्णय की औपचारिक घोषणा 19 जुलाई, 1905 को कर दी गई। इसके कुछ दिनों के पश्चात् ही इस निर्णय के विरुद्ध लगभग पूरे बंगाल में अनेक सभाएँ आयोजित की गईं। इसी क्रम में 7 अगस्त, 1905 को कलकत्ता के टाउन हॉल में एक विशाल सभा का आयोजन किया गया, और 'स्वदेशी आंदोलन' आरंभ करने की घोषणा की गई। इसके तहत विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का निर्णय लिया गया। बहिष्कार कार्यक्रम का सुझाव सर्वप्रथम कृष्ण कुमार मित्र की साप्ताहिक पत्रिका 'संजीवनी' में दिया गया था।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 12

क्रांतिकारी आंदोलन
(Revolutionary Movement)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'क्रांतिकारी आंदोलन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- क्रांतिकारी आंदोलन का प्रथम चरण
  - ➤ पृष्ठभूमि
  - ➤ क्रांतिकारी आंदोलन के उदय के कारण
  - ➤ पद्धति
  - ➤ आरंभ एवं क्षेत्रीय प्रसार
  - ➤ विदेशों में क्रांतिकारी आंदोलन
  - ➤ कामागाटामारू केस
  - ➤ तोषामारू कांड
  - ➤ सिल्क पेपर षड्यंत्र
- क्रांतिकारी आंदोलन का द्वितीय चरण
  - ➤ उत्तर भारत में क्रांतिकारी गतिविधियाँ
  - ➤ बंगाल में क्रांतिकारी आंदोलन
  - ➤ आंदोलन के दमन हेतु कि गए सरकारी प्रयास
  - ➤ असफलता के कारण
  - ➤ क्रांतिकारी दर्शन का प्रतिपादन
  - ➤ प्रथम चरण एवं द्वितीय चरण के क्रांतिकारी आंदोलन के स्वरूप में अंतर
  - ➤ मूल्यांकन
  - ➤ अन्य स्मरणीय तथ्य

क्रांतिकारी आंदोलन का प्रथम चरण (First Phase of Revolutionary Movement)

पृष्ठभूमि (Background)

कांग्रेस के उदारवादियों की संवैधानिक कार्यपद्धति तथा उग्रवादियों के 'निष्क्रिय प्रतिरोध की नीति' से निराश एवं ब्रिटिश सरकार के प्रतिक्रियावादी तथा दमनकारी नीतियों के प्रतिक्रियास्वरूप युवा वर्ग की राष्ट्रीयता की भावना से अत्यधिक प्रेरित पीढ़ी ने क्रांतिकारी आंदोलन का रास्ता अपनाया। क्रांतिकारी विचारधारा, क्रियाकलापों और आंदोलन का एक निश्चित लक्ष्य था देश की स्वतंत्रता। क्रांतिकारी यह विश्वास करते थे कि राष्ट्रीय जीवन में जो भी उपयुक्त तत्त्व हैं, जैसे कि- धार्मिक तथा राजनैतिक स्वतंत्रता, नैतिक मूल्य तथा भारतीय संस्कृति। इन सभी को विदेशी शासन या तो समाप्त कर देगा या फिर उनके स्वरूप को विकृत कर देगा।

क्रांतिकारियों का मानना था कि औपनिवेशिक शासन का अंत केवल हिंसक साधनों के प्रयोग द्वारा ही संभव है। अत: फ्राँसीसी, अमेरिकी, आयरलैंड आदि की क्रांतियों के आदर्शों से प्रेरित इन क्रांतिकारियों ने अपने उद्देश्य की प्राप्ति हेतु हिंसा का मार्ग अपनाया। महाराष्ट्र, बंगाल तथा पंजाब इत्यादि इसके प्रमुख केंद्र थे।

क्रांतिकारी आंदोलन के उदय के कारण (Causes of the Rise of Revolutionary Movement)

- क्रांतिकारी आंदोलन के उदय में उदारवादी और उग्रवादी नेतृत्वकर्ताओं द्वारा जनता को कुशल नेतृत्व प्रदान करने में असफलता प्रमुख कारण था। इससे उपजी हताशा के कारण अपनी राष्ट्रवादी ऊर्जा की अभिव्यक्ति के लिए ये युवा क्रांतिकारी आंदोलन के विकल्प की ओर मुड़ गए।
- वस्तुत: उदारवादी प्रार्थना और प्रतिवेदन की रणनीति की अव्यावहारिकता तथा उग्रवादी नेतृत्वकर्ताओं के निष्क्रिय प्रतिरोध की नीति की असफलता ने क्रांतिकारियों में बम और पिस्तौल की राजनीति के प्रति उनका विश्वास जगाया। साथ ही, गरम दल द्वारा आंदोलन की कमियों का विश्लेषण करने या इस गतिरोध से बाहर निकल सकने के नए रास्ते सुझाने में असफलता के कारण यह भावना और बलवती हो गई।
- साथ ही, सरकारी दमन और अधिकारियों के दंभ ने बंगाल के युवकों को विद्रोही बनाया। जैसे– बंगाल विभाजन, स्वदेशी आंदोलन का क्रूर दमन, सार्वजनिक सभाओं, प्रदर्शनों एवं प्रेस पर प्रतिबंध लगाना इत्यादि।
- इस दमन के विरोध में युगांतर ने लिखा कि– बल को बल से रोका जाना चाहिए। साथ ही 'संध्या' तथा 'काल' जैसे समाचार-पत्रों ने भी क्रांतिकारी विचारों का प्रसार किया। इससे प्रेरित होकर युवा पीढ़ी वैयक्तिक वीरता की कार्यवाहियों एवं क्रांतिकारी आंदोलन की ओर उन्मुख हुई।
- 1905 ई. में जापान द्वारा रूस के पराजित होने पर यूरोपीय अपराजेयता का मिथक टूट गया। साथ ही आयरलैंड के राष्ट्रवादियों और रूसी निहिलिस्टों द्वारा किए जाने वाले वीरतापूर्ण कार्यों और क्रांतिकारी गतिविधियों ने भी भारतीय युवकों को प्रेरित किया।

पद्धति (Methodology)

- क्रूर, अलोकप्रिय एवं महत्त्वपूर्ण अधिकारियों एवं उसके समर्थकों की हत्याकर उनका मनोबल तोड़ना।
- गुप्त समितियों की स्थापना करना।
- ब्रिटेन के शत्रु देशों से सैनिक सामग्री प्राप्त करने के प्रयास। इसके लिए विदेशों में रह रहे समान विचारधारा वाले भारतीयों से सहायता प्राप्त करना।
- क्रांतिकारी विचारों के प्रसार के लिए साहित्य, समाचार-पत्रों एवं पैम्फलेट का प्रकाशन करना।
- क्रांतिकारी गतिविधियों के संचालन हेतु धन एकत्रित करने के लिए डकैती डालना, इसे 'स्वदेशी डकैती' कहा गया।

हेड ऑफिस : 636, भू-तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-09
प्रयागराज केंद्र : महाराणा प्रताप चौराहा, स्टैनली रोड, सिविल लाइन्स, प्रयागराज, उ.प्र.
9555-124-124

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 13

गांधीवादी आंदोलन
(Gandhian Movement)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'गांधीवादी आंदोलन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- महात्मा गांधी : आरंभिक जीवन एवं दक्षिण अफ्रीका प्रवास
- गांधी की विचारधारा
  - ➤ गांधी की कार्यपद्धति
- गांधी की भारत वापसी
- गांधी के आगमन के समय भारत की परिस्थितियाँ
- गांधी युग का आरंभ
  - ➤ चंपारण सत्याग्रह, 1917 ई.
  - ➤ खेड़ा आंदोलन, 1918 ई.
  - ➤ अहमदाबाद का श्रमिक विवाद, 1918 ई
- रॉलेट एक्ट, 1919 ई.
  - ➤ रॉलेट सत्याग्रह
  - ➤ जलियाँवाला बाग हत्याकांड, 1919 ई.
- खिलाफत आंदोलन
  - ➤ खिलाफत आंदोलन के कारण
  - ➤ खिलाफत आंदोलन के उद्देश्य
  - ➤ खिलाफत आंदोलन का घटनाक्रम
  - ➤ खिलाफत आंदोलन का पतन
  - ➤ खिलाफत आंदोलन के परिणाम एवं योगदान
  - ➤ खिलाफत आंदोलन की समीक्षा

महात्मा गांधी : आरंभिक जीवन एवं दक्षिण अफ्रीका प्रवास (Mahatama Gandhi : Early Life and South Africa Stay)

- महात्मा गांधी का जन्म गुजरात के काठिया में पोरबंदर नामक स्थान पर 2 अक्तूबर, 1869 को हुआ था, इनका पूरा नाम मोहन दास करमचंद गांधी था। इनके पिता पोरबंदर रियासत के दीवान थे। गांधी का विवाह पोरबंदर के व्यापारी की पुत्री कस्तूरबा से हुआ था। इंग्लैंड से 1891 ई. में बैरिस्टरी पास करने के उपरांत ये पहले राजकोट और फिर बंबई में वकालत करने लगे।
- गांधी की विचारधारा और उनकी कार्यपद्धति को मज़बूत आधार प्रदान करने में दक्षिण अफ्रीका से प्राप्त हुए अनुभवों की विशेष भूमिका रही। गांधी की दक्षिण अफ्रीका की यात्रा का आरंभ 1893 ई. में हुआ था, जब वे गुजराती व्यापारी दादा अब्दुल्ला का मुकदमा लड़ने के लिए डरबन गए। गांधी, दक्षिण अफ्रीका की यात्रा करने वाले पहले भारतीय बैरिस्टर थे।
- दक्षिण अफ्रीकी प्रवास के दौरान गांधी को भारतीय प्रवासियों के साथ किए जा रहे भेदभाव एवं दुर्व्यवहार का अनुभव हुआ। इस दौरान गांधी ने देखा कि जो एशियाई नागरिक मज़दूरी करने के उद्देश्य से दक्षिण अफ्रीका गए थे उनके साथ प्रजातीय उत्पीड़न एवं भेदभाव का व्यवहार किया जा रहा था। इस संदर्भ में गांधी की डरबन से प्रिटोरिया तक प्रथम श्रेणी के डिब्बे में की जा रही यात्रा महत्त्वपूर्ण थी, जब रास्ते में ही मेरित्सबर्ग नामक स्टेशन पर एक अंग्रेज़ ने गांधीजी को धक्का देकर ट्रेन से जबरन उतार दिया।
- इस घटना ने गांधीजी के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डाला। दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेज़ों द्वारा भारतीय प्रवासियों के प्रति अपनाई जा रही रंगभेद की नीति के तहत भारतीयों को पंजीकरण प्रमाणपत्र की अनिवार्यता, गैर-ईसाई भारतीयों के विवाह को अमान्य करार देना आदि अन्यायपूर्ण कानूनों को लागू किया गया। गांधी ने इसी शोषण, अत्याचार तथा भेदभावपूर्ण व्यवहार के विरुद्ध सत्याग्रह किया तथा जेल भी गए।
- 1894 से 1906 ई. तक गांधीजी की राजनीतिक गतिविधियाँ नरमपंथी आंदोलन के रूप में रहीं। यह संघर्ष का उदारवादी चरण था, जब गांधीजी दक्षिण अफ्रीकी विधानमंडलों तथा लंदन में उपनिवेशों का काम देखने वाले गृह सचिव और ब्रिटिश संसद को ज्ञापन और याचिकाएँ भेजते थे। गांधीजी ने ब्रिटेन से मांग की कि वह दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की दशा सुधारने का प्रयास करें, क्योंकि भारत ब्रिटेन का उपनिवेश है। इसके लिए गांधीजी ने 1894 ई. में नटाल इंडियन कांग्रेस की स्थापना की, इंडियन ओपिनियन नामक समाचार-पत्र का प्रकाशन आरंभ किया तथा 1904 ई. में फीनिक्स आश्रम की स्थापना की गई।
- 1906 ई. तक आते–आते गांधीजी को यह विश्वास हो गया कि संघर्ष के इन तरीकों से भेदभावपूर्ण व्यवहारों एवं अत्याचारों को समाप्त नहीं किया जा सकता। 1906 से 1914 ई. के दौरान गांधी के संघर्ष का दूसरा चरण अहिंसात्मक प्रतिरोध या सविनय अवज्ञा का काल था, जिसके अंतर्गत गांधीजी ने अवज्ञा आंदोलन को पहली बार दक्षिण अफ्रीका में शुरू किया, जिसे 'सत्याग्रह' का नाम दिया गया। गांधीजी ने बताया कि अहिंसा पर आधारित सत्य के लिए संघर्ष ही सत्याग्रह है।
- दक्षिण अफ्रीकी सरकार ने एक कानून बनाकर यह निश्चित कर दिया कि प्रत्येक भारतीय को अपने अंगूठे के निशान वाले पंजीकरण प्रमाण–पत्र को हर समय अपने पास रखना होगा। गांधीजी ने इस भेदभावमूलक कानून का विरोध किया तथा अहिंसात्मक प्रतिरोध सभा का गठन किया। गांधी द्वारा 1906 ई. में सर्वप्रथम सत्याग्रह का प्रयोग पंजीकरण प्रमाणपत्र के विरुद्ध किया गया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 14	असहयोग आंदोलन एवं स्वराज पार्टी (Non-Cooperation Movement and Swaraj Party)

इकाई 14

असहयोग आंदोलन एवं स्वराज पार्टी
(Non-Cooperation Movement and Swaraj Party)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'असहयोग आंदोलन एवं स्वराज पार्टी तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

असहयोग आंदोलन
- असहयोग आंदोलन के कारण
- असहयोग आंदोलन के कार्यक्रम
- असहयोग आंदोलन का घटनाक्रम
- असहयोग आंदोलन का परिणाम/उपलब्धियाँ
- असहयोग आंदोलन की वापसी
- असहयोग आंदोलन की समीक्षा

स्वराज पार्टी
- पृष्ठभूमि
- स्वराज दल की स्थापना
- स्वराज दल की सफलता एवं दमन
- स्वराज दल को गांधी का समर्थन
- मुड्डीमैन समिति
- स्वराज दल का अंत
- 1922-27 ई. के दौरान कुछ अन्य राजनीतिक दल एवं आंदोलन

असहयोग आंदोलन (Non-Cooperation Movement)

असहयोग आंदोलन के कारण (Causes of Non-Cooperation Movement)

- भारतीयों ने ब्रिटिश सरकार को इस उम्मीद पर प्रथम विश्वयुद्ध में समर्थन दिया था कि युद्ध समाप्ति के बाद भारत को स्वशासन प्रदान करने की प्रक्रिया शुरू कर दी जाएगी, परंतु आशा के विपरीत भारत को रॉलेट एक्ट तथा जलियाँवाला बाग हत्याकांड जैसी दमनात्मक कार्रवाई मिली। ब्रिटिश शासन के कठोर रुख के कारण भारतीय जनमानस का असंतोष चरम पर जा पहुँचा।
- मॉन्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों द्वारा प्रांतों में द्वैध शासन प्रणाली लागू की गई, जिसके अंतर्गत निर्वाचित सरकार को बहुत ही कम अधिकार दिए गए थे, फलतः भारतीय नेतृत्व निराश और असंतुष्ट था।
- तुर्की के खलीफा के साथ किए गए दुर्व्यवहार के कारण भारतीय मुस्लिम असंतुष्ट थे और उन्होंने खलीफा के सम्मान को पुनर्स्थापित करने के लिए खिलाफत आंदोलन शुरू किया था। गांधीजी ने इसे मुस्लिम समाज को राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्यधारा में जोड़ने का उचित अवसर मानकर एक राष्ट्रव्यापी असहयोग आंदोलन की शुरुआत की।
- प्रथम विश्वयुद्ध के समाप्त होने के पश्चात् बढ़ती महँगाई और बेरोज़गारी जैसे आर्थिक मुद्दों ने मज़दूर वर्ग, दस्तकारों तथा मध्यम वर्ग आदि को उद्वेलित किया।

असहयोग आंदोलन की शुरुआत (Beginning of Non-Cooperation Movement)

- असहयोग आंदोलन शुरू करने से पूर्व ही जहाँ गांधीजी ने ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रदान की गई 'कैसर ए हिंद' की उपाधि लौटा दी, वहीं जमनालाल बजाज ने 'राय बहादुर' की उपाधि लौटा दी।
- 1920 ई. में गांधीजी ने खिलाफत समिति के समक्ष ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध अहिंसक असहयोग आंदोलन शुरू करने का प्रस्ताव रखा।
- जलियाँवाला बाग हत्याकांड, खलीफा के प्रति अपमानजनक व्यवहार एवं स्वराज के विषय पर गांधीजी ने कांग्रेस को असहयोग आंदोलन प्रारंभ करने के लिए प्रेरित किया।
- असहयोग आंदोलन की औपचारिक शुरुआत 1 अगस्त, 1920 को हुई। ध्यातव्य है कि इसी दिन बाल गंगाधर तिलक की मृत्यु भी हो गई। शुरुआत में मध्यम वर्ग की भागीदारी पर बल दिया गया। एक करोड़ रुपए 'तिलक स्वराज कोष' के अंतर्गत जमा करने तथा इतने ही स्वयंसेवकों को भर्ती करने का लक्ष्य रखा गया।
- आंदोलन से संबंधित कार्यक्रमों की रूपरेखा निश्चित करने के लिए कलकत्ता में कांग्रेस कार्यसमिति का अधिवेशन किया गया, जिसमें गांधीजी ने असहयोग प्रस्ताव प्रस्तुत किया। लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में 1920 ई. में कलकत्ता के एक विशेष अधिवेशन में असहयोग आंदोलन के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया।
- असहयोग प्रस्ताव का विरोध एनी बेसेंट, बिपिनचंद्र पाल, मदन मोहन मालवीय, सुरेंद्रनाथ बनर्जी, शंकरन नायर, देशबंधु चितरंजन दास, मुहम्मद अली जिन्ना तथा सर नारायण चंद्रावरकर ने किया। ध्यातव्य है कि सी.आर. दास का असहयोग आंदोलन को लेकर विरोध विधान परिषदों के बहिष्कार के कारण था, किंतु मोतीलाल नेहरू एवं अली बंधुओं के समर्थन से यह प्रस्ताव पारित किया गया। साथ ही कुछ समय पश्चात् लाला लाजपतराय एवं चितरंजन दास ने भी असहयोग प्रस्ताव से संबंधित विरोध वापस ले लिया। एनी बेसेंट, बिपिनचंद्र पाल, मुहम्मद अली जिन्ना, जी.एस. खपार्डे आदि नेताओं ने कांग्रेस से असंतुष्ट होकर त्यागपत्र दे दिया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 15	साइमन कमीशन, नेहरू रिपोर्ट एवं लाहौर अधिवेशन Simon Commission, Nehru Report and Lahore Session)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'साइमन कमीशन, नेहरू रिपोर्ट एवं लाहौर अधिवेशन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- साइमन कमीशन, 1927 ई.
- नेहरू रिपोर्ट, 1928 ई.
- जिन्ना की चौदह–सूत्री मांगें
- कांग्रेस का लाहौर अधिवेशन, 1929 ई.

साइमन कमीशन (Simon Commission), 1927 ई.

- नवंबर 1927 ई. में साइमन कमीशन की स्थापना सर जॉन साइमन की अध्यक्षता में एक सात सदस्यीय आयोग के रूप में की गई। इस आयोग का गठन 1919 ई. के भारत शासन अधिनियम के प्रावधानों की जाँच हेतु किया गया था।
- दरअसल, 1919 ई. के संवैधानिक सुधारों में एक प्रावधान यह भी किया गया था कि 10 वर्ष पश्चात् इन संवैधानिक सुधारों की समीक्षा हेतु एक आयोग का गठन किया जाएगा। साइमन कमीशन का गठन वास्तव में इसी प्रावधान का परिणाम था, लेकिन इस आयोग का गठन 10 वर्षों की अपेक्षा 8 वर्ष पश्चात् (1927 ई.) ही कर दिया गया। क्योंकि 'अनुदारवादी ब्रिटिश सरकार' को यह आभास हो रहा था कि ब्रिटेन में आयोजित होने वाले आगामी चुनाव में श्रमिक दल के हाथों उसकी पराजय हो सकती है।
- ऐसी परिस्थिति में सत्ताधारी अनुदारवादी दल (Conservative Party) की ब्रिटिश सरकार ने यह तय किया कि ब्रिटिश साम्राज्य के भविष्य से संबंधित इस मुख्य विषय को अनुभवहीन श्रमिक दल (Labour Party) के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता, इसीलिए निर्धारित समय से पूर्व ही साइमन आयोग का गठन कर दिया गया।
- इस कमीशन को 'श्वेत कमीशन' (White Commission) भी कहा गया, क्योंकि इसके सभी सदस्य ब्रिटेन के थे। ध्यातव्य है कि इस आयोग का कार्य यह निर्णय लेना था कि क्या भारतीयों को और अधिक संवैधानिक अधिकार प्रदान किए जाएँ? फिर यदि संवैधानिक अधिकार प्रदान किए भी जाएँ तो उनका स्वरूप क्या हो? इसके अलावा, आयोग का कार्य इस बात का भी अध्ययन करना था कि ब्रिटिश भारतीय प्रांतों में सरकारें कैसे चल रहीं हैं? प्रतिनिधि संस्थाएँ ठीक से कार्य कर रही हैं या नहीं तथा शिक्षा का विकास कितना हुआ है? अर्थात् समग्र रूप से देखा जाए तो इस आयोग का मौलिक कार्य भारतीयों के संवैधानिक भविष्य का फैसला करना था। इसके बावजूद, आयोग के सातों सदस्यों में से एक भी भारतीय नहीं था। यही कारण था कि आयोग को भारत आगमन के साथ ही तीखे विरोध का सामना करना पड़ा।
- इसी कड़ी में जब 3 फरवरी, 1928 को साइमन आयोग के सदस्यों का दस्ता बंबई पहुँचा, तो उन्हें तीव्र विरोध के साथ-साथ व्यापक हड़तालों का भी सामना करना पड़ा। इसके अतिरिक्त, 'काले झंडों' व 'साइमन वापस जाओ' के नारों से उनका स्वागत किया गया।
- विरोध प्रदर्शन की ये घटनाएँ सिर्फ बंबई तक ही सीमित नहीं रहीं, बल्कि भारत के कई हिस्से इसकी चपेट में आए। लाहौर में विरोध प्रदर्शन का नेतृत्व कर रहे लाला लाजपत राय पुलिस द्वारा किए गए लाठीचार्ज के दौरान गंभीर रूप से घायल हो गए थे, जिससे नवंबर 1928 में उनकी मृत्यु हो गई थी। इसी दौरान अपनी मृत्यु से पूर्व लाला लाजपत राय ने कहा था कि "मेरे ऊपर जिस लाठी से प्रहार किए गए हैं, वही एक दिन ब्रिटिश साम्राज्य के ताबूत में आखिरी कील साबित होगी।"
- 11 दिसंबर 1927 को इलाहाबाद में हुए एक सर्वदलीय सम्मेलन में आयोग में एक भी भारतीय सदस्य को न नियुक्त किए जाने के कारण इसके बहिष्कार का निर्णय लिया गया।
- 27 दिसंबर, 1927 को हुए मद्रास अधिवेशन में जब एम. ए. अंसारी कांग्रेस अध्यक्ष थे, तब उन्होंने साइमन कमीशन का बहिष्कार किया था।
- इसके अलावा, लखनऊ में साइमन कमीशन के विरोध प्रदर्शन का नेतृत्व जवाहरलाल नेहरू तथा गोविंद बल्लभ पंत ने किया था। इन पर भी ब्रिटिश सरकार ने लाठी चार्ज करवाया था।
- कांग्रेस सहित सभी प्रमुख राजनीतिक दलों, जैसे– हिंदू महासभा, इंडियन लिबरल फेडरेशन (तेज बहादुर सप्रू द्वारा गठित संगठन), किसान मज़दूर पार्टी, जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिम लीग, भारतीय औद्योगिक एवं वाणिज्यिक कांग्रेस आदि ने साइमन कमीशन का बहिष्कार किया। 1928 ई. में साइमन कमीशन के बहिष्कार के मुद्दे पर मुस्लिम लीग में विभाजन हो गया, जिसमें मुहम्मद अली जिन्ना द्वारा समर्थित गुट बहिष्कार के मुद्दे पर कांग्रेस के समर्थन में था।
- साइमन कमीशन के विरुद्ध जन आक्रोश का सबसे प्रमुख तथ्य यह है कि इसमें बड़ी संख्या में युवाओं ने भाग लिया तथा पहली बार देश की युवा शक्ति के बड़े वर्ग ने राजनीतिक भागीदारी का

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 16	सविनय अवज्ञा आंदोलन (Civil Disobedience Movement)

इकाई 16: सविनय अवज्ञा आंदोलन (Civil Disobedience Movement)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'सविनय अवज्ञा आंदोलन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- पृष्ठभूमि/कारण
  - ➤ गांधीजी की 11–सूत्री मांगें
- आंदोलन का प्रारंभ
  - ➤ दांडी मार्च
  - ➤ नमक केंद्रीय मुद्दे के रूप में
  - ➤ आंदोलन के कार्यक्रम
  - ➤ आंदोलन का प्रसार
- गांधी-इरविन समझौता, 1931 ई.
- कांग्रेस का कराची अधिवेशन
- गोलमेज सम्मेलन
  - ➤ प्रथम गोलमेज सम्मेलन
  - ➤ द्वितीय गोलमेज सम्मेलन
  - ➤ तृतीय गोलमेज सम्मेलन
- सविनय अवज्ञा आंदोलन का पतन
- सविनय अवज्ञा आंदोलन की समीक्षा

पृष्ठभूमि/कारण (Background/Causes)

- सविनय अवज्ञा आंदोलन कोई अकस्मात् उपजा आंदोलन नहीं था, बल्कि इसकी उत्पत्ति के बीज इससे पूर्ववर्ती ऐतिहासिक घटनाओं में खोजे जा सकते हैं। दरअसल, असहयोग आंदोलन स्थगित किए जाने के बाद से ही साम्राज्यवादी सत्ता के विरुद्ध अभिव्यक्ति कई रूपों में सामने आने लगी, जिसमें साइमन कमीशन का विरोध, क्रांतिकारियों द्वारा की गई उग्र एवं हिंसक घटनाएँ, आर्थिक मंदी से उत्पन्न तनाव, नेहरू रिपोर्ट को अस्वीकार किया जाना आदि सम्मिलित थे।
- यह महत्त्वपूर्ण है कि असहयोग आंदोलन की वापसी के साथ ही देश में क्रांतिकारी आंदोलन के दूसरे चरण का आगाज़ हो गया। इसके अंतर्गत काकोरी कांड, चटगाँव शस्त्रागार की लूट, मेरठ षड्यंत्र केस, लाहौर षड्यंत्र केस जैसी विभिन्न हिंसक क्रांतिकारी घटनाएँ घटित हुईं, जिसने न सिर्फ सरकार विरोधी असंतोष को उग्र किया, बल्कि हिंसा एवं भय के वातावरण को भी जन्म दिया।
- साइमन कमीशन को भारतीय संवैधानिक स्थिति के पुनरीक्षण के लिए नियुक्त किया गया, जिसमें एक भी भारतीय सदस्य नहीं था। इस कारण भारतीय जनमानस को राष्ट्रीय अपमान का एहसास हुआ और उनमें ब्रिटिश शासन के प्रति घृणा व असंतोष की भावना उमड़ने लगी।
- अगले चरण में, 1928 ई. में प्रस्तुत नेहरू रिपोर्ट के माध्यम से राष्ट्रवादी नेताओं ने भारत का संविधान निर्मित करने के संदर्भ में सिफारिशें प्रस्तुत कीं, जिसे ब्रिटिश सरकार द्वारा अस्वीकार कर दिया गया।
- इसके अतिरिक्त, 1929 ई. की वैश्विक आर्थिक मंदी से भारत का निर्यात तेज़ी से कम हुआ तथा निर्यात योग्य नकदी फसलों के दामों में भी भारी गिरावट आई। अन्य वस्तुओं के मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि से भारतीय अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ा। इस प्रकार, वैश्विक मंदी से आम जनमानस से लेकर पूंजीपति वर्ग तक सभी प्रभावित हुए।
- सबसे बढ़कर, 1929 ई. के लाहौर कांग्रेस अधिवेशन में पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पारित किया गया, जिसमें ब्रिटिश शासन को स्वीकार करना, ईश्वर और मनुष्य दोनों के प्रति पाप करने के समान बताया गया। इसी अवसर पर 26 जनवरी, 1930 को पूर्ण स्वतंत्रता दिवस मनाने की घोषणा भी की गई तथा गांधीजी को सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारंभ करने हेतु अधिकृत किया गया।
- अंत में, सविनय अवज्ञा आंदोलन आरंभ होने का तत्कालीन कारण रहा– गांधी द्वारा वायसराय इरविन के समक्ष प्रस्तुत 11–सूत्री मांगों को अस्वीकार किया जाना।

गांधीजी की 11–सूत्री मांगें (11-Point Demands of Gandhiji)

- जब पूर्व निर्धारित तिथि 26 जनवरी, 1930 को पहली बार 'स्वतंत्रता दिवस' मनाया गया तो उसे संयुक्त प्रांत, दिल्ली, पंजाब व बंबई के अतिरिक्त शेष भारत में कोई खास समर्थन नहीं मिला। इससे इतर, बिहार आदि कुछ क्षेत्रों में पुलिस व कांग्रेस कार्यकर्ताओं के मध्य छिट-पुट हिंसक झड़पें भी देखी गईं। ऐसी स्थिति में, गांधीजी ने 'स्वतंत्रता' का व्यापक अर्थ स्पष्ट करने, जनमानस को ब्रिटिश शासन के विरुद्ध लामबंद करने तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा जनता पर किए जा रहे अत्याचारों को समाप्त करने हेतु 11–सूत्री मांगें प्रस्तुत की। इन मांगों को गांधीजी ने अपने समाचार पर 'यंग इंडिया' के माध्यम से वायसराय लॉर्ड इरविन के समक्ष प्रस्तुत किया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 17

सांप्रदायिक निर्णय एवं पूना पैक्ट
(Communal Award and Poona Pact)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'सांप्रदायिक निर्णय एवं पूना पैक्ट तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- द्वितीय सविनय अवज्ञा आंदोलन
- सांप्रदायिक निर्णय एवं पूना समझौता
- गांधी एवं हरिजनोत्थान
- प्रांतीय चुनाव
- प्रांतो में कांग्रेस शासन के 28 माह

द्वितीय सविनय अवज्ञा आंदोलन (Second Civil Disobedience Movement)

कांग्रेस ने 1932 ई. में सविनय अवज्ञा आंदोलन पुनः आरंभ कर दिया। 4 जनवरी, 1932 को गांधीजी गिरफ्तार कर लिए गए। कांग्रेस गैर-कानूनी संस्था घोषित कर दी गई और सरकार का दमनचक्र तीव्र हो गया।

अप्रैल 1932 में विलिंग्डन ने बंबई शहर तथा बंगाल को दो काले धब्बों के समान बताया। क्रूर दमन की वजह से इस बार का आंदोलन कम तीव्र रहा। अब तक व्यापारी वर्ग का भी समर्थन कम हो गया था। बंबई के मिल मालिकों ने जापानियों के साथ होने वाली स्पर्द्धा के डर से लंकाशायर के साथ मिलकर अक्तूबर 1932 ई. में लीस मोदी पैक्ट किया।

इन सभी बातों के बावजूद जनता का आक्रोश थमा नहीं। 1931 ई. में आतंकवाद ने पहले के सभी रिकॉर्ड तोड़ दिए। इस वर्ष कुल 92 वारदातें हुईं, जिनमें 9 हत्याएँ शामिल थीं। सुनीति चौधरी तथा शांति घोष नामक दो स्कूली छात्राओं ने त्रिपुरा के डिस्ट्रिक मजिस्ट्रेट सी. जी. बी. स्टीवन को गोली मार दी।

त्रिचनापल्ली के निकट पडकोट्टा नामक एक छोटी रियासत में कुछ दिनों के लिए ऐसी स्थिति रही, जिसे इंडियन एनुअल रजिस्टर में भीड़ राज कहा गया है। नए करों का विरोध करती हुई भीड़ ने सेना तथा पुलिस को दबोच लिया। न्यायालय के दस्तावेज़ फाड़ दिए। कृष्णा ज़िले के डुग्गीराला गोपालकृष्णय्या यहाँ के स्थानीय नेता थे। इन्होंने तेलुगू कथाकाव्य 'गांधी गीता' लिखकर किसान तथा राष्ट्रीय आंदोलन को लोकप्रिय बनाया।

दूसरे गोलमेज सम्मेलन के पश्चात् प्रारंभ हुए सविनय अवज्ञा आंदोलन ने परंपरागत तरीकों से इतर भी कुछ नए तरीकों को अपनाया। इनमें कपड़े तथा शराब की दुकानों पर धरना देना, कांग्रेस के झंडे को लहराना, सार्वजनिक रूप से कांग्रेस का अधिवेशन करना तथा किसी सीमा तक कांग्रेस की गतिविधियों को अवैध रूप से चलाना आदि शामिल था। इसके लिए अगस्त 1932 ई. में बंबई के निकट गुप्त रेडियो ट्रांसमीटर का भी उपयोग किया गया, यद्यपि इनमें सबसे अंतिम तरीके की गांधी ने कड़ी आलोचना की।

मई 1932 ई. में मध्य प्रांत के बैतूल में रामू व मक्डू गोंड जैसे आदिवासी नेताओं ने वन सत्याग्रह किया।

दूसरे सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय कश्मीर तथा अलवर जैसे देशी राज्यों में महत्त्वपूर्ण आंदोलन हुए। कश्मीर में अप्रैल 1932 ई. में यद्यपि राजा द्वारा मुस्लिम जनता को निवांसेज इंक्वायरी कमीशन की सिफारिशों के आधार पर कुछ रियायतें दी गई परंतु, वे संतुष्ट नहीं हुए। अंततः अक्तूबर 1932 ई. में मुस्लिम कॉन्फ्रेस की स्थापना की गई, इसके नेता शेख अब्दुल्ला थे, जिन्होंने तत्कालीन निरंकुश तंत्र विरोधी नेता पी.एन. बजाज से भी संपर्क कर लिया था। 1933 ई. में अलवर राज्य में सवाई जयसिंह द्वारा किए गए राजस्व वृद्धि के पश्चात् आंदोलन हुए। यहाँ पर मेव लोगों ने आंदोलन प्रारंभ किया, जो कि अर्द्ध-आदिवासी कृषक समुदाय से थे तथा काफी हद तक इस्लाम के अनुयायी थे। इन्होंने छापामार युद्ध प्रारंभ कर दिया। 12 फरवरी, 1933 को वायसराय विलिंग्डन ने कहा कि यहाँ की स्थिति जितनी खराब हो सकती है, वह हो रही है। अंततः ब्रिटिश सरकार ने आलोकप्रिय महाराजा को यूरोप भेजकर अलवर का प्रशासन कुछ समय तक अपने हाथ में लेने का निश्चय किया।

सांप्रदायिक पंचाट एवं पूना समझौता (Communal Award and Poona Pact), 1932 ई.

- द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में विभिन्न संप्रदायों और दलित वर्ग के लिए पृथक् निर्वाचक-मंडल के विषय पर कोई निर्णय नहीं हो पाया था, इसलिए इस विषय पर सहमति बनाने के लिए ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैमसे मैकडोनाल्ड को प्राधिकृत किया गया, जिन्होंने भारतीय मताधिकार समिति (लोथियन समिति) के अध्ययन के आधार पर 16 अगस्त, 1932 को सांप्रदायिक पंचाट की घोषणा कर दी।
- इस अधिनिर्णय में मुसलमानों, ईसाइयों, सिखों, आंग्ल-भारतीयों एवं महिलाओं को पृथक्-पृथक् सांप्रदायिक निर्वाचक-मंडलों में मतदान कर अपने उम्मीदवारों के चयन का अधिकार प्रदान किया गया, साथ ही पंचाट में अनुसूचित जाति के नाम से दलित वर्ग

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 18	अगस्त प्रस्ताव व क्रिप्स मिशन (August Offer and Cripps Mission)

इकाई 18: अगस्त प्रस्ताव व क्रिप्स मिशन (August Offer and Cripps Mission)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'अगस्त प्रस्ताव व क्रिप्स मिशन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- द्वितीय विश्वयुद्ध और भारत
- अगस्त प्रस्ताव, 1940 ई.
- व्यक्तिगत सत्याग्रह, 1940 ई.
- क्रिप्स मिशन, 1942 ई.
- ➤ क्रिप्स प्रस्ताव का मूल्यांकन

द्वितीय विश्वयुद्ध तथा भारत (Second World War and India)

- द्वितीय विश्वयुद्ध के शुरू होने के साथ ही, वायसराय लिनलिथगो ने भारत को जर्मनी के विरुद्ध युद्धरत राष्ट्र घोषित कर दिया। भारत में आपातकालीन कानून लागू कर दिया गया तथा प्रांतीय सरकारों की स्वायत्तता पर नियंत्रण आरोपित कर दिया गया।
- सुभाषचंद्र बोस द्वितीय विश्वयुद्ध को एक दुर्लभ अवसर के रूप में देखते थे और इसका उपयोग भारत को स्वतंत्र कराने के लिए करना चाहते थे, लेकिन गांधीजी ने बोस की इस नीति का तीखा विरोध किया। गांधीजी का मत था कि भारत को ब्रिटेन की बर्बादी की कीमत पर स्वतंत्रता नहीं चाहिए।
- इसी दौरान कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक में यह निर्णय लिया गया कि भारत के लिए युद्ध और शांति के मुद्दे पर अंतिम फैसला भारत की जनता द्वारा ही किया जाना चाहिए, किंतु ब्रिटिश सरकार के नकारात्मक रवैये के कारण कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने मंत्रिमंडलों से त्यागपत्र दे दिया। ऐसे में, ब्रिटिश सरकार भारतीयों को मनाना चाहती थी कि वे ब्रिटिश पक्ष की ओर से युद्ध में शामिल हो जाएँ। अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु भारतीयों का समर्थन प्राप्त करने के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा 'अगस्त प्रस्ताव' लाया गया।

अगस्त प्रस्ताव (August Offer), 1940 ई.

- कांग्रेस मंत्रिमंडलों के त्यागपत्र देने के पश्चात् मार्च 1940 में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद की अध्यक्षता में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन वर्तमान झारखंड के 'रामगढ़' में आयोजित हुआ। इस अधिवेशन में कांग्रेस ने द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटिशों को सहयोग प्रदान करने के लिए उनके समक्ष एक शर्त आधारित प्रस्ताव रखा। शर्त यह थी कि ब्रिटिश सरकार को केंद्र में अंतरिम राष्ट्रीय सरकार की स्थापना करनी होगी।
- इसके प्रत्युत्तर में 8 अगस्त, 1940 को युद्ध में भारतीयों का सहयोग प्राप्त करने के उद्देश्य से लॉर्ड लिनलिथगो ने कांग्रेस के समक्ष एक प्रस्ताव रखा, जिसे 'अगस्त प्रस्ताव' कहा गया। इस प्रस्ताव के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित थे–
  - ➤ वायसराय की 'कार्यकारिणी परिषद्' (Executive Council) में भारतीय प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाई जाएगी।
  - ➤ 'युद्ध परामर्शदात्री समिति' (War Advisory Council) का गठन किया जाएगा।
  - ➤ भारत के लिए संविधान का निर्माण करना मुख्य रूप से भारतीयों की ज़िम्मेदारी होगी और इसके लिए युद्ध के पश्चात् प्रतिनिधिमूलक संविधान-निर्मात्री सभा की स्थापना की जाएगी।
  - ➤ अल्पसंख्यकों को आश्वस्त किया गया कि भारत का शासन किसी भी ऐसे वर्ग को नहीं सौंपा जाएगा, जिसकी सत्ता को भारत के राष्ट्रीय जीवन के विशाल और शक्तिशाली तत्त्व अस्वीकार करते हों।
- अगस्त प्रस्ताव की महत्त्वपूर्ण विशेषता भारतीयों को संविधान बनाने का अधिकार देना था, चूँकि 'अगस्त प्रस्ताव' में एक तो, कांग्रेस की अंतरिम सरकार के गठन की मांग को अस्वीकार कर दिया गया था और दूसरा, संविधान बनाने का अधिकार युद्ध के पश्चात् निश्चित किया गया था। इसलिए, कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को सिरे से खारिज कर दिया। इस प्रस्ताव के संदर्भ में जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि "जिस अधिराज्य के विचार पर यह प्रस्ताव आधारित है, वह दरवाज़े में जड़ी जंग लगी कील की तरह है।"
- हालाँकि, मुस्लिम लीग ने इस प्रस्ताव में अल्पसंख्यकों के संबंध में दिए गए आश्वासन का तो स्वागत किया, जिसमें 'भावी संविधान' अल्पसंख्यकों की अनुमति से ही बनने की बात कही गई थी, किंतु प्रस्ताव में पाकिस्तान निर्माण की बात स्पष्ट रूप से उल्लिखित न किए जाने के कारण लीग ने भी इसे अस्वीकार कर दिया।

हेड ऑफिस : 636, भू-तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-09
प्रयागराज केंद्र : महाराणा प्रताप चौराहा, स्टैनली रोड, सिविल लाइन्स, प्रयागराज, उ.प्र.
9555-124-124

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 19

भारत छोड़ो आंदोलन
(Quit India Movement)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'भारत छोड़ो आंदोलन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- पृष्ठभूमि/कारण
- आंदोलन का आरंभ
- आंदोलन के विभिन्न चरण
- आंदोलन का पतन
- आंदोलन से संबंधित कुछ मुद्दे
  - ➤ क्या आंदोलन स्वत: स्फूर्त था?
  - ➤ आंदोलन के दौरान हिंसक गतिविधियाँ
- आंदोलन की समीक्षा

पृष्ठभूमि/कारण (Background/Causes)

- 1939 ई. में शुरू हुए द्वितीय विश्वयुद्ध ने भारत की राजनीति को भी प्रभावित किया। तत्कालीन वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो ने भारतीयों से सलाह किए बिना ही भारत को युद्ध में जर्मनी एवं इटली के विरुद्ध ब्रिटेन का पक्षकार घोषित कर दिया।
- ऐसे में, भारतीय नेताओं ने इस प्रकार भारत को युद्ध में शामिल किए जाने का तीखा विरोध किया तथा शर्त रखी कि यदि अंग्रेज़, युद्ध में भारत का समर्थन प्राप्त करना चाहते हैं, तो उन्हें भारतीय को पर्याप्त संवैधानिक रियायतें प्रदान करनी होंगी। इसी संदर्भ में लॉर्ड लिनलिथगो ने 'अगस्त प्रस्ताव' प्रस्तुत किया। किंतु, इस प्रस्ताव से भारतीयों को पर्याप्त रियायतें प्राप्त न हो सकीं और अगस्त प्रस्ताव विफल हो गया।
- जब 7 दिसंबर, 1941 की सुबह जापान ने पर्ल हार्बर (अमेरिका) पर हमला कर दिया, तो उसके पश्चात् दक्षिण-पूर्व एशिया में मित्र-राष्ट्रों की स्थिति कमज़ोर होने लगी। इन्हीं परिस्थितियों में गांधीजी ने अपने अंग्रेज़ी में प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक पत्र 'हरिजन' में लिखा कि "अंग्रेज़ों भारत को जापान के लिए मत छोड़ो, बल्कि भारत को भारतीयों के लिए व्यवस्थित रूप से छोड़ जाओ।"
- फिर जैसे-जैसे युद्ध आगे बढ़ता जा रहा था, धुरी-राष्ट्रों की स्थिति मज़बूत होती जा रही थी। तो ऐसे में, मित्र-राष्ट्रों के लिए भारत का समर्थन प्राप्त करना अपरिहार्य हो गया था। इस कारण ब्रिटेन पर अंतर्राष्ट्रीय (मुख्यत: अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूज़वेल्ट व चीनी राष्ट्रपति च्यांग काई शेक का) दबाव बढ़ता जा रहा था कि वे शीघ्रातिशीघ्र भारतीयों का समर्थन प्राप्त करें। वास्तव में, ये वे परिस्थितियाँ थीं, जिन्होंने अंग्रेज़ों को विवश किया कि वे भारतीयों को पर्याप्त संवैधानिक रियायतें प्रदान करें। इसी कड़ी में, वर्ष 1942 में ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने 'क्रिप्स मिशन' की स्थापना की।
- मगर क्रिप्स मिशन के माध्यम से भी अंग्रेज़ों ने संवैधानिक रियायतों के नाम पर केवल लीपापोती करने का ही प्रयास किया। इसलिए, भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं ने इस मिशन की सिफारिशों को अस्वीकार कर दिया।
- इसके अलावा, विश्वयुद्ध की परिस्थितियों में बढ़ती महँगाई एवं आवश्यक वस्तुओं के अभाव ने आम जनमानस को असंतुष्ट कर दिया। ऐसे में, राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं ने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध संघर्ष शुरू करने के लिए जनसामान्य को प्रेरित किया।
- ध्यातव्य है कि सविनय अवज्ञा आंदोलन के पश्चात् देश में कोई व्यापक आंदोलन भी नहीं चला था। हालाँकि, 1940 ई. में 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' शुरू किया गया था, लेकिन यह आंदोलन जनता के आक्रोश एवं असंतोष को प्रकट कर पाने में असमर्थ रहा। फलत: आम जनमानस में एक नए संघर्ष के लिए पर्याप्त ऊर्जा एवं उत्साह विद्यमान था, जिसका प्रयोग गांधी ने भारत छोड़ो आंदोलन को सफल बनाने में किया।
- अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय परिस्थितियों ने गांधी को जनता के जुझारूपन एवं आक्रोश का प्रयोग साम्राज्यवादी सत्ता के विरुद्ध करने के लिए प्रेरित किया। इसका परिणाम, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के अंतर्गत अंतिम संघर्ष के रूप में सामने आया। यह आखिरी टकराहट 'भारत छोड़ो आंदोलन' (अगस्त क्रांति) के रूप में प्रस्फुटित हुई। इस संदर्भ में गांधीजी ने कहा कि "भारत को भगवान भरोसे छोड़ दीजिए। अगर यह कुछ ज़्यादा हो, तो उसे अराजकता के भरोसे छोड़ दीजिए। यह व्यवस्थित और अनुशासित अराजकता समाप्त होनी चाहिए और अगर गैर-कानूनियत फैलती है, तो मैं उसका जोखिम उठाने को तैयार हूँ।" इस प्रकार, गांधीजी ने ब्रिटिश सरकार से भारत छोड़ देने तथा भारत की सत्ता भारतीयों को सौंप देने की मांग करते हुए यह आंदोलन प्रारंभ किया।

आंदोलन का आरंभ (Beginning of the Movement)

- 14 जुलाई, 1942 को वर्धा में कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में 'भारत छोड़ो आंदोलन का प्रस्ताव' प्रस्तुत किया गया, जिसमें यह मांग की गई कि भारत में ब्रिटिश शासन शीघ्र समाप्त होना चाहिए। गांधीजी के प्रस्ताव को प्रारंभ में कांग्रेस द्वारा स्वीकार नहीं किया जा रहा था, ऐसे में गांधीजी ने कांग्रेस को चुनौती देते हुए कहा कि "मैं देश की बालू से ही कांग्रेस से भी बड़ा आंदोलन खड़ा कर दूंगा।" इसके पश्चात् वर्धा बैठक में ही यह प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया गया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 20

1942-47 के बीच का भारत
(India during 1942-47)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत '1942-47 के बीच का भारत तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- सी.आर. फॉर्मूला, 1944 ई.
- देसाई-लियाकत समझौता
- वेवेल योजना, 1945 ई.
- शिमला सम्मेलन
- भारत में आम चुनाव
- आज़ाद हिंद फौज
- लाल किला मुकदमा, 1945 ई.
- शाही भारतीय नौसेना विद्रोह, 1946 ई.
- कैबिनेट मिशन, 1946 ई.
- संविधान सभा का चुनाव, 1946 ई.
- प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस
- अंतरिम सरकार का गठन
- एटली की घोषणा
- बाल्कन योजना
- माउंटबेटन योजना
- भारत की स्वतंत्रता एवं विभाजन

सी.आर. फॉर्मूला (CR Formula), 1944 ई.

- संवैधानिक गतिरोध को दूर करने के लिए कुछ व्यक्तिगत प्रयास भी किए जा रहे थे। सी. राजगोपालचारी कांग्रेस और मुस्लिम लीग के मध्य समझौता करने के समर्थक थे। 10 जुलाई, 1944 को गांधीजी की स्वीकृति से उन्होंने देश में विद्यमान सांप्रदायिक समस्या को दूर करने के उद्देश्य से कांग्रेस और मुस्लिम लीग के मध्य समझौतों की एक योजना भी प्रस्तुत की।
- सी. राजगोपालाचारी के नाम से बनी इस योजना को सी.आर. फॉर्मूला कहा गया, जिसके प्रमुख प्रावधान इस प्रकार हैं–
  - मुस्लिम लीग भारत की स्वतंत्रता की मांग का समर्थन करे तथा कांग्रेस के साथ मिलकर अस्थायी सरकार के गठन में सहयोग करे।
  - द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद भारत के मुस्लिम बहुल उत्तर-पश्चिमी एवं उत्तर-पूर्वी भाग की सीमा का निर्धारण करने हेतु एक कमीशन का गठन किया जाए।
  - वयस्क मताधिकार प्रणाली के आधार पर इन क्षेत्रों में मतगणना करने के उपरांत इनके भारत से अलग होने के संबंध में निर्णय लिया जाए।
  - सभी राजनीतिक दलों को मतदान से पूर्व अपनी राजनीतिक विचारधारा का प्रचार करने की पूर्ण स्वतंत्रता हो।
  - देश के विभाजन की स्थिति में सभी अनिवार्य विषयों, जैसे– रक्षा, वाणिज्य, यातायात तथा संचार आदि पर आपसी समझौते की व्यवस्था की जाए।
  - उपर्युक्त सभी शर्तें ब्रिटिश सत्ता से भारत की पूर्ण स्वतंत्रता दिए जाने के पश्चात् ही मान्य होंगी।
- गांधीजी ने इसी फॉर्मूले के आधार पर जिन्ना से वार्ता की तथा इसी कारण उन्होंने जिन्ना को कायदे-ए-आज़म कहकर संबोधित किया। ध्यातव्य है कि जिन्ना ने पाकिस्तान की मांग पर अडिग रहकर इस फॉर्मूले को अस्वीकार कर दिया था। जिन्ना की यह भी मांग थी कि उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों में केवल मुसलमानों को ही मत देने का अधिकार दिया जाए न कि पूरी जनसंख्या को। कालांतर में यही योजना भारत विभाजन का आधार बनी। इस प्रकार, राजगोपालाचारी पहले कांग्रेसी नेता थे, जिन्होंने पाकिस्तान की मांग का समर्थन किया था।

देसाई-लियाकत समझौता (Desai-Liaqat Pact)

संवैधानिक गतिरोध को हल करने के एक अन्य प्रयास के तहत केंद्रीय विधानमंडल में कांग्रेस के नेता भूला भाई देसाई और मुस्लिम लीग के उपनेता लियाकत अली खान ने अंतरिम सरकार के गठन के लिए एक प्रस्ताव तैयार किया। इसके मुख्य प्रावधान निम्नलिखित थे–

- अंतरिम सरकार में कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों केंद्रीय विधानमंडल से समान संख्या में अपने सदस्यों को मनोनीत करेंगे।
- 20 प्रतिशत स्थान अल्पसंख्यक सदस्यों के लिए सुरक्षित होंगे।
- नई सरकार भारत सरकार अधिनियम, 1935 ई. के प्रावधानों के तहत कार्य करेगी।

परंतु, मुस्लिम लीग और कांग्रेस के मध्य इन प्रस्तावों पर सहमति नहीं बन पाई तथा मतभेद और गहरे होते गए।

वेवेल योजना (Wavell Plan), 1945 ई.

- 1945 ई. के दौरान जापान के विरुद्ध द्वितीय विश्वयुद्ध में भारतीय सहयोग की आवश्यकता तथा अमेरिका एवं रूस द्वारा चर्चिल सरकार पर दबाव की रणनीति ने ब्रिटिश सरकार को भारत की संवैधानिक समस्या के उचित हल निकालने के लिए विवश किया। इसी दौरान श्रमिक दल एवं उसके नेता एटली की घोषणाओं व आरोपों ने भी सरकार एवं ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल पर दबाव बनाने का कार्य किया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 21	समाजवादी आंदोलन (Socialist Movement)

समाजवादी आंदोलन
(Socialist Movement)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'समाजवादी आंदोलन तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- पृष्ठभूमि
- वामपंथी विचारधारा के उदय के कारण
  - ➤ उद्देश्य एवं कार्यक्रम
  - ➤ घोषित कार्यक्रम
- भारत में साम्यवाद के विकास के चरण
- वामपंथी विचारधारा का योगदान
- मूल्यांकन/असफलता के कारण
- कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना
- कुछ आरंभिक समाजवादियों का संक्षिप्त परिचय
- कांग्रेस समाजवादी पार्टी का कार्यक्रम/विचारधारा
- सफलताएँ/राष्ट्रीय राजनीति पर प्रभाव
- कांग्रेस समाजवादी पार्टी और कांग्रेस
- कांग्रेस समाजवादी पार्टी और साम्यवादी
  - ➤ नेहरू और सुभाष की समाजवादी विचारधारा : एक तुलना
- अन्य समाजवादी दल
- निष्कर्ष

पृष्ठभूमि (Background)

- भारत में वामपंथी विचारधारा के उद्भव एवं प्रसार के पीछे मुख्य प्रेरक शक्ति 1917 ई. की रूसी क्रांति की सफलता को माना जाता है। रूस में विश्व के पहले समाजवादी राज्य की स्थापना की गई। रूस के नवीन शासकों द्वारा चीन एवं एशिया के अन्य हिस्सों से अपने उपनिवेशवादी अधिकारों को छोड़ने की घोषणा तथा पूरे शासन व्यवस्था में शोषितों को महत्त्वपूर्ण स्थान देने से उपनिवेशों की शोषित जनता में यह विचारधारा लोकप्रिय हुई।

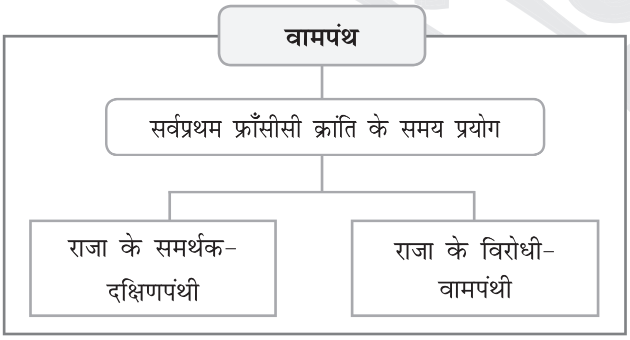

- 1920 ई. के दशक में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन पर वामपंथी विचारधारा का इतना प्रभाव महसूस किया गया कि राष्ट्रीय आंदोलन के चरित्र में बदलाव आ गया। अब राजनीतिक स्वतंत्रता के रूप में 'राष्ट्रवाद' तथा आर्थिक मुक्ति के लिए संघर्ष के रूप में 'समाजवाद', दोनों के उद्देश्य एक-दूसरे के साथ जुड़ गए थे।
- ब्रिटिश सरकार वामपंथी विचारों के विरुद्ध थी। साम्राज्यवाद विरोधी प्रकृति के कारण वामपंथी विचारों का भारत में स्वागत किया गया। रूस में समाजवादी सरकार की स्थापना ने साम्राज्यवाद से जूझ रहे एशियाई देशों में उत्साह भर दिया। इन देशों की जनता भी 'मुक्ति' की चाह में एक नई लड़ाई के लिए तैयार हो गई।
- वामपंथी विचारधारा राष्ट्रीय कांग्रेस की युवा पीढ़ी के प्रतीक जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचंद्र बोस की पसंदीदा विचारधारा बन गई थी। साथ ही, इसका प्रभाव निराश क्रांतिकारियों, असहयोग आंदोलनकारियों, खिलाफत आंदोलनकारियों तथा किसान मज़दूर कार्यकर्ताओं पर ज़्यादा था, जो राजनीतिक और सामाजिक मुक्ति के लिए नए रास्ते की तलाश कर रहे थे।
- वामपंथी स्पष्ट रूप से कांग्रेस की नीतियों के आलोचक थे तथा वे भारत में सर्वहारा के अधिनायकत्व को स्थापित करने के लिए वर्ग-संघर्ष में आस्था रखते थे। फिर भी, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में वामपंथी विचारधारा की जितनी शाखाएँ प्रस्फुटित हुईं, उन सबका लक्ष्य भारत को विदेशी दासता से 'मुक्ति' दिलाना ही था।

वामपंथी विचारधारा के उदय के कारण (Causes of the Rise of Communist Ideology)

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारत में वामपंथी विचारधारा को लोकप्रिय बनाने में क्रांतिकारी आंदोलन की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। साथ ही, तत्कालीन समय में अन्य परिस्थितियाँ भी मौजूद थीं, जिन्होंने वामपंथी विचारधारा के विषय में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया-

- प्रथम विश्वयुद्ध के बाद वैश्विक अर्थव्यवस्था की दशा खराब हो गई थी। भारतीय अर्थव्यवस्था की स्थिति भी डाँवाडोल थी। दिन-प्रतिदिन की आवश्यक वस्तुओं की कीमतें बढ़ गई थीं। साथ ही, व्यापारी वर्ग की कालाबाज़ारी और बेईमानी ने देश में अकाल की परिस्थितियों को जन्म दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि अब साम्राज्यवाद और पूंजीवाद का घृणित चेहरा लोगों के सामने आ गया था।
- इसके अलावा, रूस में साम्यवादी सरकार की स्थापना ने भारतीयों के एक वर्ग को वामपंथी विचारों के प्रति आकर्षण और रोमांच से भर दिया था। वामपंथी सामाजिक-आर्थिक विचारों ने बुद्धिजीवी वर्ग, राजनीतिक नेतृत्वकर्ताओं, क्रांतिकारी आंदोलनकारियों तथा श्रमिकों में एक नए उत्साह का संचार किया।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 22 ब्रिटिश भारत में संवैधानिक विकास
(Constitutional Development in British India)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'ब्रिटिश भारत में संवैधानिक विकास तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- परिचय
- ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल में संवैधानिक विकास
  - रेग्युलेटिंग एक्ट, 1773 ई.
  - 1781 ई. का संशोधनात्मक अधिनियम
  - पिट्स इंडिया एक्ट, 1784 ई.
  - 1786 ई. का अधिनियम
  - चार्टर अधिनियम, 1793 ई.
  - चार्टर अधिनियम, 1813 ई.
  - चार्टर अधिनियम, 1833 ई.
  - चार्टर अधिनियम, 1853 ई.
- क्राउन के शासनकाल में संवैधानिक विकास
  - भारत शासन अधिनियम, 1858 ई.
  - भारत परिषद् अधिनियम, 1861 ई.
  - भारतीय परिषद् अधिनियम, 1892 ई.
  - भारतीय परिषद् अधिनियम, 1909 ई.: मार्ले-मिंटो सुधार
  - भारत शासन अधिनियम, 1919 ई.: मॉन्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार
  - भारत शासन अधिनियम, 1935 ई.

परिचय (Introduction)

- ऐतिहासिक दृष्टि से ब्रिटिशकालीन संवैधानिक विकास की यात्रा 1599 ई. से आरंभ होती है, जब महारानी एलिज़ाबेथ ने एक राजलेख द्वारा ईस्ट इंडिया कंपनी को पंद्रह वर्षों के लिए व्यापारिक एकाधिकार प्रदान किया, जिसे 1599 ई. के चार्टर के रूप में भी जाना जाता है।
- इस चार्टर द्वारा कंपनी को समस्त पूर्वी देशों में व्यापार करने का अधिकार दिया गया और कंपनी की समस्त शक्तियाँ एक 24 सदस्यीय परिषद् में निहित कर दी गईं।
- आगे चलकर '1726 ई. के चार्टर' द्वारा कलकत्ता, बंबई तथा मद्रास प्रेसीडेंसी के गवर्नरों को विधि-निर्माण की शक्ति सौंपी गई।
- 1765 ई. की इलाहाबाद संधि के तहत कंपनी को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी (राजस्व वसूलने का अधिकार) प्राप्त हुई।
- दीवानी अधिकार मिलते ही कंपनी के कर्मचारियों ने बंगाल में व्यापक स्तर पर लूटपाट मचाई तथा व्यक्तिगत व्यापार के माध्यम से अधिकाधिक धन संचय की प्रवृत्ति की ओर उन्मुख हुए। इससे कंपनी के भीतर ही व्यापक भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिला।
- साथ ही, लगातार युद्धरत रहने से कंपनी की आर्थिक स्थिति खराब हुई तथा उसे अत्यधिक वित्तीय क्षति का सामना करना पड़ा। स्थिति इतनी गंभीर हो गई कि कंपनी को अपने कर्मचारियों के वेतन भुगतान करने में कठिनाई उत्पन्न होने लगी।
- अतएव, कंपनी ने ब्रिटिश संसद से आर्थिक सहायता के लिए प्रस्ताव भेजा, फलस्वरूप ब्रिटिश संसद ने कंपनी में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं कुप्रशासन को दूर करने के लिए 1773 ई. का रेग्युलेटिंग एक्ट पारित किया। इसी क्रम में ब्रिटिश सरकार द्वारा कई अन्य अधिनियम भी पारित किए गए।
- कंपनी के शासन के अधीन 1773 से 1857 ई. तक विभिन्न अधिनियम पारित किए गए और उसके पश्चात् 1947 ई. तक ब्रिटिश क्राउन के अंतर्गत भारतीय शासन व्यवस्था में व्यापक स्तर पर संवैधानिक, प्रशासनिक एवं न्यायिक बदलाव किए गए।
- यद्यपि, इन परिवर्तनों की प्रकृति और उद्देश्य ब्रिटिश उपनिवेशवादी लक्ष्यों की पूर्ति करना था, तथापि इनके द्वारा भारत की राजनीतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था में आधुनिक राज्य के तत्त्वों का समावेश हुआ।

ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल में संवैधानिक विकास (Constitutional Development during the Regime of East India Company)

रेग्युलेटिंग एक्ट (The Regulating Act), 1773 ई.

- ब्रिटिशकालीन भारत के संवैधानिक विकास के क्रम में 1773 ई. के रेग्युलेटिंग एक्ट का विशेष महत्त्व है। इससे भारत में कंपनी के प्रशासन पर ब्रिटिश संसदीय नियंत्रणों के प्रयासों की शुरुआत हुई, परिणामस्वरूप, अब कंपनी के प्रशासन पर केवल व्यापारियों का अधिकार ही नहीं रहा, बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश क्राउन का भी नियंत्रण सशक्त हुआ।
- इस अधिनियम के पारित करने का प्रमुख उद्देश्य कंपनी के कार्यों पर भारत तथा इंग्लैंड दोनों स्थानों पर नियंत्रण स्थापित करना तथा कंपनी में व्याप्त दोषों को दूर करना था।
- इस एक्ट के तहत कंपनी के डायरेक्टरों के लिए यह प्रावधान किया गया कि वे राजस्व से संबंधित सभी मामलों तथा दीवानी एवं सैन्य प्रशासन से संबंधित सभी प्रमुख कार्यों से ब्रिटिश सरकार को अवगत कराएंगे। (इस प्रकार, पहली बार ब्रिटिश मंत्रिमंडल को कंपनी के मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त हुआ।)

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 23	देशी रियासत (Princely State)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'देशी रियासत तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- देशी रियासतों में प्रजामंडल आंदोलन
- देशी रियासतों के प्रति कांग्रेस की नीति व आंदोलन का विकास
- रियासतों का एकीकरण
- भूदान आंदोलन

देशी रियासतों में प्रजामंडल आंदोलन (Prajamandal Movement in Princely States)

- भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के प्रसार तथा लोकतंत्र, नागरिक अधिकारों एवं उत्तरदायी शासन के प्रति बढ़ती राजनीतिक चेतना ने देशी रियासतों की जनता में भी जागरूकता को बढ़ाया। साथ ही, 20वीं सदी के प्रथम एवं द्वितीय दशक के दौरान देशी रियासतों में ब्रिटिश भारत से भागकर आए हुए राष्ट्रवादी क्रांतिकारियों ने भी जनता के बीच राजनीतिक चेतना जगाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- ब्रिटिश भारत की लगभग 600 देशी रियासतों में देश की एक-तिहाई जनसंख्या निवास करती थी। इन रियासतों के शासक ब्रिटिश सरकार के अधीनस्थ मित्र की भाँति कार्य करते थे। हैदराबाद सबसे बड़ी एवं बिलवारी सबसे छोटी रियासत थी।
- 1920 ई. के असहयोग आंदोलन के दौरान विभिन्न रियासतों की प्रजा द्वारा प्रजामंडलों (राज्य की जनता के सम्मेलनों) की स्थापना की गई। इन प्रजामंडलों का उद्देश्य देशी रियासतों के प्रशासनिक उदारीकरण एवं लोकतंत्र की स्थापना पर बल देना था।
- 1920 ई. के नागपुर अधिवेशन में कांग्रेस द्वारा सर्वप्रथम देशी रियासतों के प्रति अपनी नीति की घोषणा की गई। साथ ही, एक प्रस्ताव पारित कर रियासतों के राजाओं से शीघ्र ही उत्तरदायी सरकार के गठन की मांग की गई एवं वहाँ की जनता को कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण करने की योग्यता प्रदान की गई, किंतु उन्हें कांग्रेस के नाम पर किसी प्रकार का आंदोलन चलाए जाने की अनुमति नहीं दी गई।

देशी रियासतों के प्रति कांग्रेस की नीति व आंदोलन का विकास (Congress Policy with respect to Princely States and Development of Movement)

- दिसंबर 1927 ई. में अखिल भारतीय राज्य जन कॉन्फ्रेंस (ऑल इंडिया स्टेट्स पीपुल्स कॉन्फ्रेंस) का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन के आयोजन में बलवंत राय मेहता (सचिव), मणिलाल कोठारी, जी.आर. अभ्यंकर की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी।
- सविनय अवज्ञा आंदोलन के पश्चात् 1930 ई. के दशक में इन देशी रियासतों की जनता ने भी निर्वाचन द्वारा जनप्रतिनिधित्व एवं स्वशासन के सिद्धांतों की प्राप्ति के लिए कई आंदोलन चलाए।
- देशी रियासतों में प्रजामंडल आंदोलन ने रियासतों की जनता में व्यापक जन जागृति उत्पन्न की। यही कारण है कि इन आंदोलनों को कांग्रेस का भी समर्थन प्राप्त था। जवाहरलाल नेहरू ने 1929 ई. में कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में इन देशी रियासतों के प्रति कांग्रेस की नीति के विषय में कहा था कि "भारतीय राज्य (देशी रियासतें) शेष भारत से अलग नहीं रह सकते, जिन्हें इन राज्यों के भविष्य के निर्धारण का अधिकार होगा, वह इन राज्यों की जनता ही होगी।"
- जयपुर में गांधीजी के सहयोगी जमनालाल बजाज ने आंदोलन का नेतृत्व किया तथा उड़ीसा में नवकृष्ण चौधरी ने सत्याग्रह को नेतृत्व प्रदान किया।
- इसके अतिरिक्त, इन प्रजामंडलों के आंदोलन में कांग्रेसियों ने भागीदारी की। यू.एन. ढेबर के नेतृत्व में राजकोट रियासत में चल रहे आंदोलन में कांग्रेस द्वारा रजवाड़ों के सत्याग्रह में सर्वप्रथम हस्तक्षेप किया गया। इसके समर्थन में गांधीजी ने अनशन किया तथा कस्तूरबा गांधी व मणिबेन पटेल ने गिरफ्तारियाँ दीं।
- कांग्रेस के हरिपुरा अधिवेशन (1938 ई.) में एक समझौता प्रस्ताव में पहली बार घोषित किया गया कि देशी रियासत तथा ब्रिटिश भारत दोनों ही 'पूर्ण स्वराज' के अंतर्गत आते हैं।
- 1939 ई. के त्रिपुरी अधिवेशन में कांग्रेस ने इस नई नीति को मंजूरी दी। 1939 ई. में हुए अखिल भारतीय राज्य जन कॉन्फ्रेंस के लुधियाना अधिवेशन की अध्यक्षता जवाहरलाल नेहरू द्वारा की गई।
- दक्षिण भारत में (मैसूर में) टी. भाष्यम की स्टेट कांग्रेस का विलय के.सी. रेड्डी तथा एच.सी. दासप्पा की फेडरेशन पार्टी में हो गया।
- 1942 ई. के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान ब्रिटिश भारत एवं देशी रियासतों की जनता ने एक साथ प्रतिरोध किया तथा आज़ादी के समय हैदराबाद जैसी कुछ रियासतों के अतिरिक्त सभी रियासतों के राजाओं ने विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 24

भारत में सांप्रदायिकता का विकास
(Development of Communalism in India)

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत 'भारत में सांप्रदायिकता का विकास तथा उससे संबंधित विभिन्न पहलुओं' पर आपकी समझ विकसित होगी।

- सांप्रदायिकता
- भारत में सांप्रदायिकता के विकास के कारण
- आरंभ एवं विकास
- हिंदू सांप्रदायिकता
- पाकिस्तान की मांग तथा भारत विभाजन

सांप्रदायिकता (Communalism)

- सांप्रदायिकता एक ऐसी मान्यता है, जिसके अनुसार धर्म, समाज का आधार एवं इसके विभाजन की आधारभूत इकाई तैयार करता है। इसके अंतर्गत व्यक्ति या समूह के व्यक्तिगत धार्मिक हितों के संरक्षण एवं प्रोत्साहन की भावना निहित होती है।
- वास्तव में व्यक्ति की चेतना जब राजनीतिक, सामाजिक, क्षेत्रीय आदि आधार पर प्रकट होती है तो इसे सामुदायिक चेतना कहते हैं। किंतु, जब यही चेतना धार्मिक आधार पर प्रकट होती है तो उसे सांप्रदायिक चेतना या सांप्रदायिकता कहते हैं।
- दरअसल, जब एक ही पूजा पद्धति, रीति-रिवाज एवं संस्कृति को मानने वाले लोग धार्मिक आधार पर संगठित होकर दूसरे संप्रदाय से अपनी भिन्नता प्रदर्शित करते हुए श्रेष्ठता सिद्ध करने की कोशिश करते हैं तब सांप्रदायिकता जैसी नकारात्मक विचारधारा का जन्म होता है। यह समाज में प्रतिस्पर्द्धी धार्मिक चेतना के रूप में पहचानी जाती है।
- स्पष्ट है कि सांप्रदायिकता सर्वमान्य सत्य एवं भाईचारे की भावना के विरुद्ध धर्म और संप्रदाय के आधार पर परस्पर घृणा, द्वंद्व, ईर्ष्या तथा द्वेष जैसी बुराइयों को जन्म देती है। इन्हीं बुराइयों से ग्रसित व्यक्ति में अपने धर्म के प्रति अंध-भक्ति तथा अन्य धर्म व उसके अनुयायियों के प्रति विद्वेष की भावना का विकास होता है। व्यापक हिंसा, अलगाव, सामाजिक असंतुलन जैसे विकार समाज एवं राष्ट्र को बुरी तरह प्रभावित करते हैं।
- किसी भी समाज या राष्ट्र में सांप्रदायिक विचारधारा के उद्भव एवं प्रसार के मुख्य तीन क्रमागत चरण होते हैं, जो इस प्रकार हैं–
  - (i) **हितों की समानता (Equality of Interests):** समाज में सांप्रदायिकता के उद्भव में पहला स्थान इस भावना या विश्वास का है कि एक ही धर्म के अनुयायियों के हित एकसमान होते हैं, इसलिए, समान हितों की प्राप्ति के लिए लोग धार्मिक आधार पर संगठन का निर्माण करते हैं।
  - (ii) **नरमपंथी सांप्रदायिकता (Moderate Communalism):** किसी धार्मिक संप्रदाय के अनुयायियों के हित अन्य किसी धर्म के अनुयायियों के हितों से अलग होते हैं। यथा– सभी हिंदुओं के हित मुस्लिमों के हितों तथा इसी प्रकार मुस्लिमों के हित हिंदुओं के हितों से भिन्न होते हैं।
  - (iii) **उग्रपंथी सांप्रदायिकता (Extremist Communalism):** जब यह मान लिया जाता है कि विभिन्न धर्मों के अनुयायियों और समुदायों के हित एक-दूसरे के विरोधी हैं तथा हितों के पारस्परिक टकराव की वजह से वे एकसाथ अस्तित्व में नहीं रह सकते, उग्रपंथी सांप्रदायिकता कहलाता है।
- सांप्रदायिकता एक आधुनिक विचारधारा व राजनीतिक प्रवृत्ति है, जिसके माध्यम से आधुनिक सामाजिक समूहों, वर्गों व शक्तियों की सामाजिक आकांक्षाओं को अभिव्यक्त कर उनकी राजनीतिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है।

भारत में सांप्रदायिकता के विकास के कारण (Causes of the Development of Communalism in India)

- भारत में सांप्रदायिकता का उद्भव आधुनिक काल में माना जाता है, लेकिन सांप्रदायिकता के वर्तमान स्वरूप की जड़ें अंग्रेज़ों के आगमन के साथ ही भारतीय समाज में स्थापित हुईं।
- भारत में सांप्रदायिकता के विकास के अनेक कारण हैं, जिसमें औपनिवेशिक शासन तंत्र की भूमिका, सीमित संसाधनों की उपस्थिति, दो मुख्य धर्मों हिंदू और मुस्लिमों के मध्य प्रतिस्पर्द्धी चेतना का उदय आदि समन्वित रूप से महत्त्वपूर्ण रहे हैं।
- इस प्रकार भारत में सांप्रदायिकता के उदय और विकास में विभिन्न कारणों, परिस्थितियों एवं तत्त्वों की सम्मिलित भूमिका रही, जो निम्नलिखित हैं–

सामाजिक-आर्थिक कारण (Socio-Economic Causes)

- भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना और उसके द्वारा अपनाई गई सामाजिक-आर्थिक नीतियों के फलस्वरूप बुर्जुआ वर्ग तथा व्यावसायिक वर्ग का उदय हुआ। उदय की यह प्रक्रिया हिंदू तथा मुस्लिम दोनों ही संप्रदायों में समान थी। सरकारी सेवाओं, व्यवसाय एवं औद्योगिक क्षेत्रों में इन वर्गों के मध्य प्रतिस्पर्द्धा स्वाभाविक थी, जो धीरे-धीरे बढ़ती गई। मुस्लिम बुर्जुआ वर्ग ने अपने हितों की

Copyright @ Sanskriti IAS

संस्कृति IAS

जहाँ एक नहीं, हर शिक्षक है श्रेष्ठ

देश में हिंदी माध्यम से सामान्य अध्ययन की सर्वश्रेष्ठ टीम

सामान्य अध्ययन

फाउंडेशन कोर्स (प्रिलिम्स + मेन्स)

प्रत्येक माह नया बैच आरंभ

हाइब्रिड कोर्स ऑफलाइन + ऑनलाइन

SPECIAL OFFER 9555 124 124

दिल्ली एवं प्रयागराज

इतिहास वैकल्पिक विषय
द्वारा- श्री अखिल मूर्ति

वैकल्पिक विषय
कार्यक्रम विशेषताएँ
- इतिहास और भूगोल में मानचित्र द्वारा अध्ययन के लिए वैज्ञानिक प्रविधि का प्रयोग
- क्लास के तुरंत बाद प्रत्येक विद्यार्थी की विषय संबंधी शंकाओं का निवारण
- प्रत्येक विद्यार्थी की पर्सनल मेंटरिंग व टेस्ट का मूल्यांकन फैकल्टी द्वारा
- मुख्य परीक्षा में पूछे गए विगत 25 वर्षों के प्रश्नों का उत्तर लेखन अभ्यास

भूगोल वैकल्पिक विषय
द्वारा- श्री कुमार गौरव

GS EXTENSIVE COURSE Prelims + Mains
- लगभग 650 कक्षाओं का एक्स्टेंसिव स्टडी प्रोग्राम
- AI द्वारा समर्थित अध्यापन प्रविधि का प्रयोग
- प्रत्येक टॉपिक का बेसिक से एडवांस लेवल तक कवरेज

INDIVIDUAL MENTORING
- शॉर्ट नोट्स और सिनॉप्सिस बनाने का प्रशिक्षण
- उत्तर लेखन में सुधार के लिए पर्सनल गाइडेंस
- स्टडी इम्प्रूवमेंट के लिए वन-टू-वन सेशन

PGP PRELIMS GUIDANCE Programme
- प्रत्येक टॉपिक के लिए महत्त्वपूर्ण करेंट अफेयर्स सिनॉप्सिस
- विगत 13 वर्षों के PYQs में पैटर्न के अनुरूप संपूर्ण पाठ्यक्रम का रिवीज़न

PCS COURSES
- UPPCS फाउंडेशन कोर्स
- BPSC फाउंडेशन कोर्स
- MPPCS फाउंडेशन कोर्स
- RAS फाउंडेशन कोर्स
- UP-RO/ARO

MMP MAINS MENTORSHIP Programme
- संस्कृति IAS की कोर फैकल्टी द्वारा Daily पर्सनल मेंटरिंग की सुविधा
- चारों प्रश्नपत्रों पर आधारित 70 टेस्ट का Intensive Test Programme

IGP INTERVIEW GUIDANCE Programme
- एक्सपर्ट के साथ वन-टू-वन सेशन
- DAF एनालिसिस एक्सपर्ट के साथ सीधा संवाद
- इंटरव्यू पैनल द्वारा मॉक इंटरव्यू सेशन्स

CSAT COURSE
- गणित और रीज़निंग का बेसिक से एडवांस लेवल तक Step-by-Step अध्यापन
- कॉम्प्रिहेंशन के प्रश्नों को सटीक और त्वरित ढंग से हल करने के लिए डायनमिक मेथडलॉजी

Mode of Courses
- Hybrid Course — Offline Classroom & Online Live Stream
- Offline Classroom
- Online Live Stream — 3 साल तक Mobile App पर वीडियो लैक्चर देखने की सुविधा

NCERT COURSE
- प्रत्येक विषय की कक्षा 6 से 12 तक की NCERT पर कक्षानुसार लैक्चर
- NCERT पर आधारित प्रिलिम्स और मेन्स के प्रश्नों पर चर्चा

QAD PROGRAMME
- GS के सभी टॉपिक्स के विगत वर्षों के PYQs पर विस्तृत प्रश्नोत्तर चर्चा
- प्रिलिम्स परीक्षा में जटिल प्रश्नों को सुगमता से हल करने में सक्षम बनाना

CURRENT AFFAIRS Programme
- राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व के समसामयिक घटनाक्रमों का विस्तृत कवरेज
- फैकल्टी द्वारा समसामयिक घटनाक्रमों का विषयवार डिस्कशन

हेड ऑफिस: 636, भू-तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
प्रयागराज केंद्र: महाराणा प्रताप चौराहा, स्टैनली रोड, सिविल लाइन्स, प्रयागराज, उ.प्र.

sanskritiias.com
Follows us: YouTube